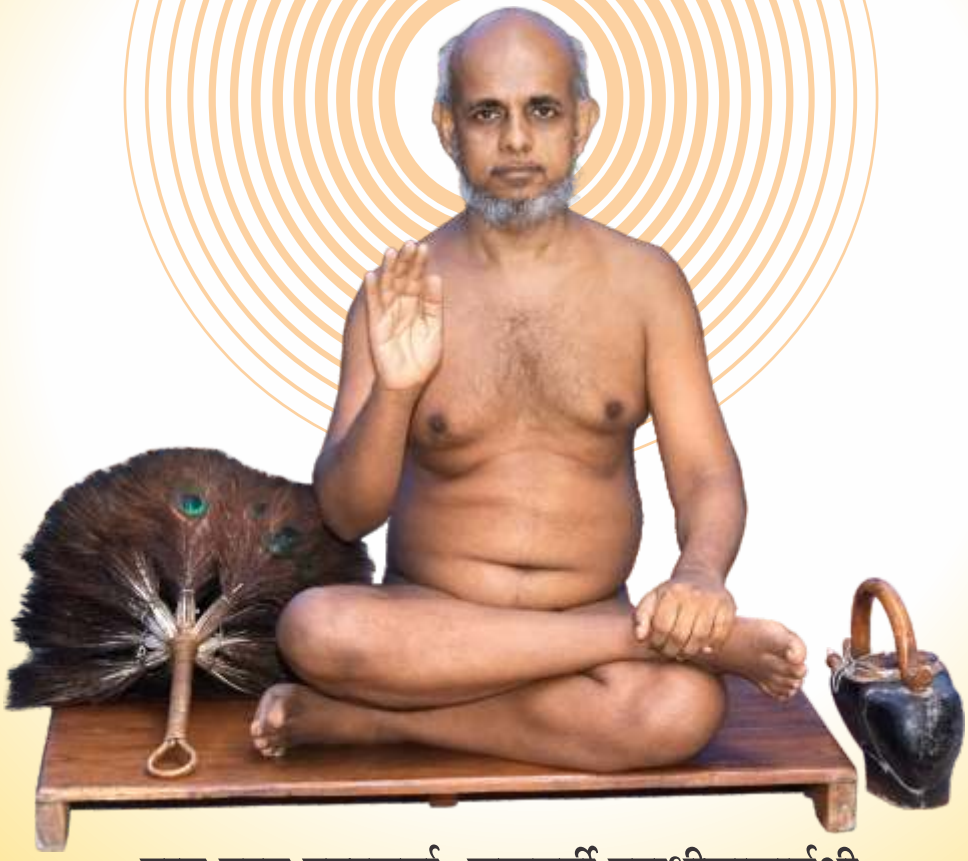

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

प्रवचनसार

(तृतीय खण्ड)

ग्रन्थकर्त्ता
परम पूज्य आचार्यश्री कुन्दकुन्द जी महाराज

सम्पादन
डॉक्टर कमलचन्द सोगाणी

अनुवादिका
श्रीमती शकुन्तला जैन

प्रकाशक :
अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जैन विद्या संस्थान महावीरजी (राजस्थान)

(परम्परानायक)

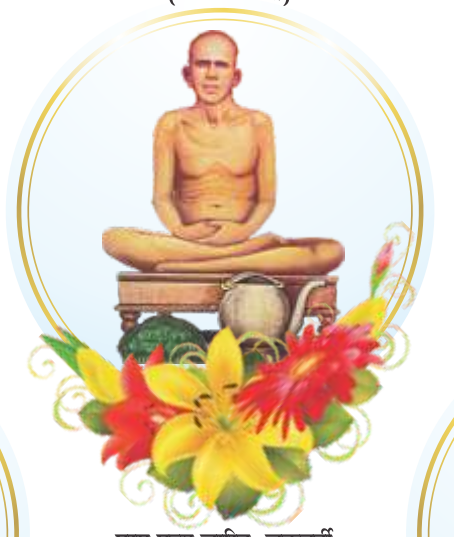

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित

प्रवचनसार

(खण्ड-3)

चारित्र-अधिकार

(मूलपाठ-डॉ. ए. एन. उपाध्ये)

(व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय, व्याकरणात्मक अनुवाद)

संपादन

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

अनुवादक

श्रीमती शकुन्तला जैन

प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित

प्रवचनसार

(खण्ड-3)

चारित्र-अधिकार

(मूलपाठ-डॉ. ए. एन. उपाध्ये)

(व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय, व्याकरणात्मक अनुवाद)

संपादन

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

निदेशक

जैनविद्या संस्थान-अपभ्रंश साहित्य अकादमी

अनुवादक

श्रीमती शकुन्तला जैन

सहायक निदेशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

- प्रकाशक

  अपभ्रंश साहित्य अकादमी

  जैनविद्या संस्थान

  दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

  श्री महावीरजी - 322 220 (राजस्थान)

  दूरभाष - 07469-224323

- प्राप्ति-स्थान

  1. साहित्य विक्रय केन्द्र, श्री महावीरजी

  2. साहित्य विक्रय केन्द्र

  दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारकजी

  सवाई रामसिंह रोड, जयपुर - 302 004

  दूरभाष - 0141-2385247

- प्रथम संस्करण : अप्रेल, 2014

- सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

- मूल्य -450 रुपये

- ISBN 978-81-926468-2-4

- पृष्ठ संयोजन

  फ्रैण्ड्स कम्प्यूटर्स

  जौहरी बाजार, जयपुर - 302 003

  दूरभाष - 0141-2562288

- मुद्रक

  जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि.

  एम.आई. रोड, जयपुर - 302 001

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
	प्रकाशकीय	V
1.	ग्रंथ एवं ग्रंथकारः सम्पादक की कलम से	1
2.	संकेत सूची	6
3.	चारित्र-अधिकार	11
4.	मूल पाठ	86
5.	परिशिष्ट-1	
	(i) संज्ञा-कोश	96
	(ii) क्रिया-कोश	109
	(iii) कृदन्त-कोश	112
	(iv) विशेषण-कोश	117
	(v) सर्वनाम-कोश	124
	(vi) अव्यय-कोश	125
	परिशिष्ट-2	
	छंद	131
	परिशिष्ट-3	
	सहायक पुस्तकें एवं कोश	134

प्रकाशकीय

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित **'प्रवचनसार (खण्ड-3) चारित्र-अधिकार'** हिन्दी-अनुवाद सहित पाठकों के हाथों में समर्पित करते हुए हमें हर्ष का अनुभव हो रहा है।

आचार्य कुन्दकुन्द का समय प्रथम शताब्दी ई. माना जाता है। वे दक्षिण के कोण्डकुन्द नगर के निवासी थे और उनका नाम कोण्डकुन्द था जो वर्तमान में कुन्दकुन्द के नाम से जाना जाता है। जैन साहित्य के इतिहास में आचार्य श्री का नाम आज भी मंगलमय माना जाता है। इनकी समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, नियमसार, रयणसार, अष्टपाहुड, दशभक्ति, बारस अणुवेक्खा कृतियाँ प्राप्त होती है।

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित उपर्युक्त कृतियों में से 'प्रवचनसार' जैनधर्म-दर्शन को प्रस्तुत करनेवाली शौरसेनी भाषा में रचित एक रचना है। इसमें कुल 275 गाथाएँ हैं। इस ग्रन्थ में तीन अधिकार हैं। 1. ज्ञान-अधिकार 2. ज्ञेय-अधिकार 3. चारित्र-अधिकार। पहले **ज्ञान**-अधिकार में 92 गाथाएँ हैं। इसमें आत्मा और केवलज्ञान, इन्द्रिय और अतीन्द्रिय सुख, शुभ, अशुभ और शुद्ध उपयोग तथा मोहक्षय आदि का प्ररूपण है। दूसरे **ज्ञेय**-अधिकार में 108 गाथाएँ हैं। इसमें द्रव्य और पर्याय की अवधारणा, द्रव्यों का स्वरूप, पुद्गल के कार्य, संसारी जीव और साधना के आयाम, शुद्धोपयोग की साधना आदि का निरूपण है। तीसरे **चारित्र**-अधिकार में 75 गाथाएँ हैं। इसमें श्रमण दीक्षा, श्रमणता का केन्द्रीय आधार परिग्रह-त्याग, श्रमण के लिए प्रेरक दिशाएँ, आगम-अध्ययन एवं पदार्थों का श्रद्धान, शुभोपयोगी व शुद्धोपयोगी श्रमण आदि का निरूपण है।

'प्रवचनसार' का हिन्दी अनुवाद अत्यन्त सहज, सुबोध एवं नवीन शैली में किया गया है जो पाठकों के लिए अत्यन्त उपयोगी होगा। इसमें गाथाओं के शब्दों का अर्थ व अन्वय दिया गया है। इसके पश्चात संज्ञा-कोश, क्रिया-कोश, कृदन्त-कोश, विशेषण-कोश, सर्वनाम-कोश, अव्यय-कोश दिया गया है। पाठक **'प्रवचनसार'** के माध्यम से शौरसेनी प्राकृत भाषा व जैनधर्म-दर्शन का समुचित ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे, ऐसी आशा है।

प्रस्तुत पुस्तक के तीन अधिकारों में से ज्ञान-अधिकार (खण्ड-1), ज्ञेय-अधिकार (खण्ड-2) प्रकाशित किये जा चुके हैं। अब **चारित्र-अधिकार (खण्ड-3)** प्रकाशित किया जा रहा है। जैन दार्शनिक साहित्य को आसानी से समझने और प्राकृत-अपभ्रंश की पाण्डुलिपियों के सम्पादन में प्रवचनसार का विषय सहायक होगा। श्रीमती शकुन्तला जैन, एम.फिल. ने बड़े परिश्रम से प्राकृत-अपभ्रंश भाषा सीखने-समझने के इच्छुक अध्ययनार्थियों के लिए **'प्रवचनसार (खण्ड-3)'** का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है। अतः वे हमारी बधाई की पात्र हैं।

पुस्तक-प्रकाशन के लिए अपभ्रंश साहित्य अकादमी के विद्वानों विशेषतया श्रीमती शकुन्तला जैन के आभारी हैं जिन्होंने **'प्रवचनसार (खण्ड-3) चारित्र-अधिकार'**का हिन्दी-अनुवाद करके जैन दर्शन व शौरसेनी प्राकृत के पठन-पाठन को सुगम बनाने का प्रयास किया है। पृष्ठ संयोजन के लिए फ्रैण्ड्स कम्प्यूटर्स एवं मुद्रण के लिए जयपुर प्रिण्टर्स धन्यवादार्ह है।

न्यायाधिपति नरेन्द्र मोहन कासलीवाल अध्यक्ष

महेन्द्र कुमार पाटनी मंत्री

डॉ. कमलचन्द सोगाणी संयोजक

प्रबन्धकारिणी कमेटी
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी
जयपुर

जैनविद्या संस्थान समिति

वीर निर्वाण संवत्-2541
23.10.2014

ग्रन्थ एवं ग्रन्थकार

संपादक की कलम से

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

श्रमणता का केन्द्रीय आधार परिग्रह-त्याग:

आचार्य कुन्दकुन्द ने प्रवचनसार के चारित्र-अधिकार में श्रमण-चर्या के विविध आयामों का विशद वर्णन करके मोक्ष-मार्ग का प्रतिपादन किया है। उनकी दृढ़ दृष्टि है कि श्रमणता का केन्द्रीय आधार परिग्रह का त्याग है। वे कहते हैं: परिग्रह से ममत्व भाव तथा श्रमण चर्या में असंयम असंदिग्ध होता है। चित्त की विशुद्धता नहीं रहती है (21,22)। आचार्य परिग्रह त्याग के महत्त्व को दर्शाते हुए कहते हैं: चूँकि परिग्रह की उपस्थिति में कर्मबन्ध किसी भी प्रकार टाला नहीं जा सकता इसलिए श्रमणों के लिए अंतरंग और बाह्य परिग्रह त्याग उपदिष्ट है (19)। आचार्य कुन्दकुन्द ने परिग्रह-त्याग की धारणा को एक गहरा आयाम देते हुए कहा है कि जो श्रमण परिग्रहरूप में मात्र देह रक्खे हुए है वह देह से भी क्रियाओं को ममत्वरहित होकर करता है। वही श्रमण स्वयं की शक्ति को न छिपाकर उस शक्ति को तप में लगाता है (28)। आचार्य के अनुसार श्रमण का जैसा जन्म हुआ है वैसा ही शरीररूपी भेष मोक्ष का साधन कहा गया है (25)। देह में आसक्ति से बचने के लिए देह के परिष्कार को अस्वीकार किया गया है (24)। जिस श्रमण में परमाणु परिमाण भी देहादि पर आसक्ति विद्यमान है तो वह सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता है। देहरूपी परिग्रह को मोक्ष के साधन के रूप में बनाये रखने के लिए आहार दिन में विधिपूर्वक एक बार स्वीकृत है।

आगम–अध्ययन एवं पदार्थों का श्रद्धान:

आचार्य कुन्दकुन्द के कथनानुसार आगम अध्ययन के बिना श्रमण स्व और पर की समझ प्राप्त नहीं कर सकता है। एकाग्रचित्तता भी आगम के स्वाध्याय से उत्पन्न होती है। जीव-अजीव पदार्थों का ज्ञान आगम से ही होता है। आगम-अध्ययन से सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है उसी से संयमाचरण भी होता है। आगम-अध्ययन के साथ पदार्थों में श्रद्धा और श्रद्धा के साथ संयम का आचरण मोक्ष के लिये आवश्यक है।

शुभोपयोगी व शुद्धोपयोगी श्रमण:

आचार्य कुन्दकुन्द ने श्रमणों का विभाजन दो प्रकार से किया है। वे कहते हैं: आगम में श्रमण दो प्रकार के कहे गये हैं- शुद्ध में संलग्न अर्थात् शुद्धोपयोगी और शुभ में संलग्न अर्थात् शुभोपयोगी। सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान का जन-शिक्षण, शिष्यों का ग्रहण, उनका विकास तथा जिनेन्द्र देव की पूजा/भक्ति का सर्वोपयोगी उपदेश- ये सब शुभोपयोगी श्रमणों की चर्या है (48)। शुभोपयोगी श्रमण जिन मार्गानुयायी गृहस्थ और श्रमणों के लिये अपेक्षा-रहित अनुकंपापूर्वक उपकार करते हैं (51)।

शुभोपयोगी श्रमण रोग से अथवा भूख से अथवा प्यास से अथवा कष्ट से लदे हुए पीड़ित श्रमण को देखकर अपनी शक्तिपूर्वक सहायता करने के लिए उसको अंगीकार करता है (52)। रोगी, पूज्य, बाल (आयु में छोटे), वृद्ध (आयु में बड़े) श्रमणों की वैयावृत्ति के लिये सांसारिक व्यक्तियों से शुभ और उचित भी वार्तालाप श्रमणों के लिए अस्वीकृत नहीं है (53)। अशुभोपयोग से मुक्त श्रमण जो शुद्ध में संलग्न अथवा शुभ में संलग्न हैं वे मनुष्य-समूह को संसार रूपी सागर से पार उतारते हैं। उन श्रमणों में जो अनुरक्त होता है, वह सर्वोत्तम अवस्था को प्राप्त करता है (60)।

जिनके द्वारा पदार्थ सम्यक् प्रकार से जान लिये गये हैं, जिन्होंने बहिरंग तथा अंतरंग परिग्रह को छोड़ दिया है जो इन्द्रिय विषयों में आसक्त नहीं है वे शुद्धोपयोगी कहे गये हैं (73)। जो अशुद्ध आचार से रहित हैं, जिसके द्वारा वास्तविक पदार्थ का निश्चय कर लिया गया है तथा जिसकी आत्मा शान्त (व्याकुलता-रहित) है तथा जिसके द्वारा श्रमणता/श्रमण-साधना पूरी कर ली गई है वह इस निरर्थक संसार में दीर्घ काल तक नहीं ठहरता है (72)।

शुद्धोपयोग की साधना में संलग्न श्रमणों में विद्यमान कष्टों का निराकरण, स्तुति और नमन सहित उनके आगमन पर सम्मान के लिए खड़े होना, उनके जाने पर उनके पीछे-पीछे चलना- ये सब प्रवृत्तियाँ शुभोपयोगी श्रमण के लिए अस्वीकृत नहीं है (47)। यदि श्रमण अवस्था में अरहंतादि में भक्ति होती है और आगम-ज्ञान में संलग्न श्रमणों के प्रति वात्सल्य भाव होता है तो श्रमण की वह चर्या शुभ-युक्त/शुभोपयोगी होती है।(46)।

श्रमण दीक्षा :

आचार्य कुन्दकुन्द कहते हैं कि जो व्यक्ति आवागमनात्मक संसार से मुक्ति चाहता है तो उसे श्रमण दीक्षा ग्रहण करनी चाहिये। सर्वप्रथम वह माता-पिता, पत्नी और पुत्रों से तथा भाई-बन्धों से अनुमति प्राप्त करले (1,2)। तत्पश्चात आचार्य से दीक्षा धारण करने की प्रक्रिया को अंगीकार करे। श्रमण दीक्षा के 28 घटक निम्नप्रकार हैं जो मूलगुण कहलाते हैं (8,9)।

पाँच महाव्रत-(1) अहिंसा (2) सत्य (3) अचौर्य (4) ब्रह्मचर्य (5) अपरिग्रह

पाँच समिति- (6) ईर्या (7) भाषा (8) एषणा (9)आदान-निक्षेपण (10) प्रतिष्ठापन

पाँच इन्द्रियों का निरोध- (11) स्पर्शन (12) रसना (13) घ्राण (14)चक्षु (15) कर्ण

छ आवश्यक- (16) सामायिक (17) वंदना (18) स्तुति (19) प्रतिक्रमण (20) स्वाध्याय (21) कायोत्सर्ग

अन्य मूलगुण- (22) केशलोंच (23) दिगम्बर अवस्था (24) अस्नान (25) भूमि पर सोना (26) दाँतौन नहीं करना (27) खड़े होकर भोजन करना (28) एक बार भोजन करना।

श्रमणों के लिए प्रेरक दिशाएँ:

जो श्रमण है वह भोजन में अथवा उपवास में अथवा आवास में अथवा विहार में अथवा शरीररूप परिग्रह में अथवा अन्य श्रमण में तथा विकथा में ममतारूप संबंध को स्वीकार नहीं करता है (15)। श्रमण की जागरूकता-रहित चर्या यदि सोने, बैठने, खड़े होने, परिभ्रमण आदि क्रियाओं में सबकाल में होती है तो वह निश्चय ही निरन्तर हिंसा मानी गई है (16)। श्रमण थोड़े परिग्रह को ग्रहण करे जो संयम के लिए आवश्यक है और आगमों द्वारा अस्वीकृत नहीं है, संयम-रहित मनुष्यों द्वारा अप्रार्थनीय है तथा ममत्व आदि भावों की उत्पत्ति-रहित है (23)।

यदि श्रमण आहार-चर्या में अथवा विहार में क्षेत्र, काल, श्रम, सहनशक्ति तथा परिग्रहरूप शरीरावस्था- उन सबको जानकर आचरण करता है तो वह थोड़े से कर्म से ही बँधनेवाला होता है (31)। जो श्रमण पाँच प्रकार से सावधान है अर्थात् सावधानीपूर्वक पाँच (ईया, भाषा, एषणा आदि) समितियों का पालन करनेवाला है, तीन प्रकार से संयत है अर्थात् मन, वचन और काय के संयम के कारण तीन गुप्ति सहित है, जिसके द्वारा पाँचों (स्पर्शन, रसना आदि) इन्द्रियाँ नियंत्रित की गई हैं, कषायें जीत ली गयी हैं तथा जो दर्शन (शुद्धात्म-श्रद्धा) और ज्ञान (स्व-दृष्टि) से पूर्ण है, वह श्रमण संयमी कहा गया है (40)।

जिसके द्वारा सिद्धान्त का सार/मर्म समझ लिया गया है तथा कषाय नियंत्रित की गई है और जो तप में विशिष्ट है तो भी यदि वह लौकिक मनुष्यों से मेल-जोल नहीं छोड़ता है तो वह संयमी नहीं होता है/नहीं हो सकता है (68)। दीक्षा ग्रहण किया हुआ श्रमण यदि इस लोक संबंधी/सांसारिक क्रियाओं में प्रवृत्ति करता है तो वह लौकिक ही कहा गया है(69)। इसलिए यदि श्रमण दुखों से मुक्ति चाहता है तो वह सदैव अपने गुणों से एकसमान अथवा अपने गुणों से ज्यादा गुणवाला श्रमण जहाँ रहता है वहाँ पर ही रहे। (70)।

जिसके लिए शत्रु और बंधुवर्ग समान है, सुख-दुख समान है, प्रशंसा-निंदा समान है, मिट्टी का ढेला और सोना समान है और जो जीवन-मरण में समान है वह परिपूर्ण श्रमण ही है (41)। जो श्रमण सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनों में एक ही साथ उद्यमी/प्रयत्नशील है वह ही मोक्ष प्राप्त करने के लिए एकाग्रचित्त हुआ माना गया है। उसके भी परिपूर्ण श्रमणता है (42)। शुद्धोपयोगी के श्रमणता कही गई है और शुद्धोपयोगी के ज्ञान-दर्शन कहा गया है तथा शुद्धोपयोगी के मोक्ष भी कहा गया है। वह ही सिद्ध है (74)। जो श्रमण सदैव आत्मस्मरण की दिशा में तथा ज्ञान में संबद्ध है और मूलगुणों में जागरूक हुआ आचरण करता है, वह परिपूर्ण श्रमणता प्राप्त किया हुआ है (14)।

संकेत-सूची

अ – अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)

अक - अकर्मक क्रिया

अनि - अनियमित

कर्म - कर्मवाच्य

क्रिविअ - क्रिया विशेषण अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)

नपुं. - नपुंसकलिंग

पु. - पुल्लिंग

भूकृ - भूतकालिक कृदन्त

व - वर्तमानकाल

वकृ - वर्तमान कृदन्त

वि - विशेषण

विधि - विधि

विधिकृ - विधि कृदन्त

स - सर्वनाम

संकृ - संबंधक कृदन्त

सक - सकर्मक क्रिया

सवि - सर्वनाम विशेषण

स्त्री. - स्त्रीलिंग

•()- इस प्रकार के कोष्ठक में मूल शब्द रखा गया है।

•[()+()+().....] इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर + चिह्न शब्दों में संधि का द्योतक है। यहाँ अन्दर के कोष्ठकों में गाथा के शब्द ही रख दिये गये हैं।

•[()-()-().....] इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर '-' चिह्न समास का द्योतक है।

•{[()+()+().....]वि} जहाँ समस्त पद विशेषण का कार्य करता है वहाँ इस प्रकार के कोष्ठक का प्रयोग किया गया है।

•जहाँ कोष्ठक के बाहर केवल संख्या (जैसे 1/1, 2/1 आदि) ही लिखी है वहाँ उस कोष्ठक के अन्दर का शब्द '**संज्ञा**' है।

•जहाँ **कर्मवाच्य, कृदन्त** आदि प्राकृत के नियमानुसार नहीं बने हैं वहाँ कोष्ठक के बाहर '**अनि**' भी लिखा गया है।

क्रिया-रूप निम्नप्रकार लिखा गया है-

1/1 **अक** या **सक** - उत्तम पुरुष/एकवचन
1/2 **अक** या **सक** - उत्तम पुरुष/बहुवचन
2/1 **अक** या **सक** - मध्यम पुरुष/एकवचन
2/2 **अक** या **सक** - मध्यम पुरुष/बहुवचन
3/1 **अक** या **सक** - अन्य पुरुष/एकवचन
3/2 **अक** या **सक** - अन्य पुरुष/बहुवचन

विभक्तियाँ निम्नप्रकार लिखी गई हैं-

1/1 - प्रथमा/एकवचन
1/2 - प्रथमा/बहुवचन
2/1 - द्वितीया/एकवचन
2/2 - द्वितीया/बहुवचन
3/1 - तृतीया/एकवचन
3/2 - तृतीया/बहुवचन
4/1 - चतुर्थी/एकवचन
4/2 - चतुर्थी/बहुवचन
5/1 - पंचमी/एकवचन
5/2 - पंचमी/बहुवचन
6/1 - षष्ठी/एकवचन
6/2 - षष्ठी/बहुवचन
7/1 - सप्तमी/एकवचन
7/2 - सप्तमी/बहुवचन

प्रवचनसार

(पवयणसारो)

प्रवचनसार

(पवयणसारो)

चारित्र-अधिकार (खण्ड-3)

1. **एवं पणमिय सिद्धे जिणवरवसहे पुणो पुणो समणे।**
पडिवज्जदु सामण्णं जदि इच्छदि दुक्खपरिमोक्खं।।

2. **आपिच्छ बंधुवग्गं विमोचिदो गुरुकलत्तपुत्तेहिं।**
आसिज्ज णाणदंसणचरित्ततववीरियायारं।।

एवं	अव्यय	और
पणमिय	(पणम) संकृ	प्रणाम करके
सिद्धे	(सिद्ध) 2/2	सिद्धों को
जिणवरवसहे[1]	[(जिणवर)-(वसह) 2/2 वि]	जिनवरों में प्रमुख
पुणो पुणो	अव्यय	बार-बार
समणे	(समण) 2/2	श्रमणों को
पडिवज्जदु	(पडिवज्ज) विधि 3/1 सक	अंगीकार करे
सामण्णं	(सामण्ण) 2/1	श्रमणता को
जदि	अव्यय	यदि
इच्छदि	(इच्छ) व 3/1 सक	चाहता है
दुक्खपरिमोक्खं	[(दुक्ख)-(परिमोक्ख) 2/1]	दुखों से मुक्ति
आपिच्छ[2]	(आपिच्छ) भूकृ 1/1 अनि	पूछ लिया

---

1. वसह- समास के अन्त में होने से यहाँ वसह का अर्थ है प्रमुख।
2. यहाँ 'आपिच्छ' के स्थान पर 'आपिच्छदो' करने से छंद-भंग होता है। अतः यहाँ 'आपिच्छ' का प्रयोग हुआ है।
यहाँ भूतकालिक कृदन्त का कर्तृवाच्य में प्रयोग किया गया है।

बंधुवग्गं	(बंधुवग्ग) 2/1	बंधुसमूह को
विमोचिदो	(विमोच) भूकृ 1/1	मुक्त किया गया
गुरुकलत्तपुत्तेहिं	[(गुरु)-(कलत्त)-(पुत्त) 3/2]	माता-पिता, पत्नि और पुत्रों द्वारा
आसिज्ज	(आसि) संकृ	धारण करके
णाणदंसणचरित्त-तववीरियायारं	[(णाण)-(दंसण)-(चरित्त)-(तव)(वीरियायार) 2/1]	ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीरियाचार

अन्वय- दुक्खपरिमोक्खं इच्छदि जदि गुरुकलत्तपुत्तेहिं विमोचिदो बंधुवग्गं आपिच्छ णाणदंसणचरित्ततववीरियायारं आसिज्ज एवं जिणवरवसहे सिद्धे समणे पुणो पुणो पणमिय सामण्णं पडिवज्जदु।

अर्थ- (जो) (कोई) दुखों से मुक्ति चाहता है (वह) यदि माता-पिता, पत्नि और पुत्रों द्वारा मुक्त किया गया (है), (तथा) (यदि) (उसने) बंधुसमूह (भाई-बंधों) को पूछ लिया (है) (तो) (वह) ज्ञानचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीरियाचार को धारण करके और जिनवरों में प्रमुख (अरहंत तीर्थंकरों) को, सिद्धों को और श्रमणों (आचार्य, उपाध्याय और साधु) को बार-बार प्रणाम करके श्रमणता को अंगीकार करे।

3. समणं गणिं गुणड्ढं कुलरूववयोविसिट्ठमिट्ठदरं।
समणेहि तं पि पणदो पडिच्छ मं चेदि अणुगहिदो।।

समणं	(समण) 2/1	श्रमण
गणिं	(गणि) 2/1	आचार्य
गुणड्ढं	(गुणड्ढ) 2/1 वि	गुणों में समृद्ध
कुलरूववयोविसिट्ठ-	[(कुलरूववयोविसिट्ठं)+	
मिट्ठदरं	(इट्ठदरं)]	
	[(कुल)-(रूव)-	कुल,रूप और आयु में
	(वयोविसिट्ठ) भूकृ 2/1 अनि]	उपयुक्त
	इट्ठदरं (इट्ठदर) 2/1 वि	अधिक अपेक्षित
समणेहि	(समण) 3/2	श्रमणों द्वारा
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
पि	अव्यय	भी
पणदो	(पणद) भूकृ 1/1 अनि	साष्टांग प्रणाम किया
पडिच्छ	(पडिच्छ) विधि 2/1 सक	स्वीकार करें
मं	(अम्ह) 2/1 सवि	मुझे
चेदि	[(च)+(इदि)]	
	च (अ) = और	और
	इदि (अ) = इस प्रकार	इस प्रकार
अणुगहिदो	(अणुगहिद) भूकृ 1/1 अनि	अनुगृहीत

अन्वय- तं समणं गणिं गुणड्ढं कुलरूववयोविसिट्ठं समणेहि इट्ठदरं पणदो मं पि पडिच्छ चेदि अणुगहिदो।

अर्थ- उस श्रमण को (जो) आचार्य (है), गुणों में समृद्ध (है), कुल, रूप और आयु में उपयुक्त (है) श्रमणों द्वारा अधिक अपेक्षित (है) (उनको) (उसने) (यह कहते हुए) साष्टांग प्रणाम किया (कि) (हे प्रभु आप!) मुझे भी स्वीकार करें। (आचार्य उसको स्वीकार करते हैं) और इस प्रकार (वह) अनुगृहीत (होता है)।

4. णाहं होमि परेसिं ण मे परे णत्थि मज्झमिह किंचि।
इदि णिच्छिदो जिदिंदो जादो जधजादरूवधरो।।

णाहं	[(ण)+(अहं)]	
	ण (अ) = नहीं	नहीं
	अहं (अम्ह) 1/1 सवि	मैं
होमि	(हो) व 1/1 अक	होता हूँ
परेसिं	(पर) 6/2 वि	पर का
ण	अव्यय	नहीं
मे	(अम्ह) 6/1 सवि	मेरे
परे	(पर) 1/2 वि	पर
णत्थि	अव्यय	नहीं हैं
मज्झमिह	[(मज्झं)+(इह)]	
	मज्झं (अम्ह) 6/1 सवि	मेरा
	इह (अ) = इस लोक में	इस लोक में
किंचि	अव्यय	कुछ भी
इदि	अव्यय	इस प्रकार
णिच्छिदो	(णिच्छिद) भूकृ 1/1 अनि	निर्णय किया हुआ
जिदिंदो	(जिदिंद) 1/1 वि	इन्द्रियों को जीतनेवाला
जादो	(जाद) भूकृ 1/1	बना
जधजादरूवधरो	[(जध) अ-(जाद) भूकृ-(रूव)-(धर) 1/1 वि]	जैसा जन्म हुआ उसी के अनुरूप शरीर को रखनेवाला

अन्वय- णाहं परेसिं होमि परे मे ण इह मज्झं किंचि णत्थि इदि णिच्छिदो जिदिंदो जधजादरूवधरो जादो।

अर्थ- मैं पर का नहीं हूँ (और) पर मेरे नहीं हैं। (इसलिये) इस लोक में मेरा कुछ भी नहीं है। इस प्रकार निर्णय किया हुआ (साधु) इन्द्रियों को जीतनेवाला (होकर) जैसा जन्म हुआ उसी के अनुरूप शरीर को रखनेवाला बना।

5. जधजादरूवजादं उप्पाडिदकेसमंसुगं सुद्धं।
रहिदं हिंसादीदो अप्पडिकम्मं हवदि लिंगं।।

6. मुच्छारंभविमुक्कं जुत्तं उवजोगजोगसुद्धीहिं।
लिंगं ण परावेक्खं अपुणब्भवकारणं जेण्हं।।

जधजादरूवजादं	[(जध) अ-(जाद) भूकृ - (रूव)-(जाद) भूकृ 1/1]	जैसा जन्म हुआ उसी के अनुरूप शरीर को रखा हुआ
उप्पाडिदकेसमंसुगं	[(उप्पाडिद) भूकृ-(केस)-(मंसुग) 1/1] 'ग' स्वार्थिक	दाढी-मूँछ व बाल लोंच किया हुआ
सुद्धं	(सुद्ध) 1/1 वि	शरीर के दोष से मुक्त
रहिदं	(रहिद) 1/1 वि	रहित
हिंसादीदो	[(हिंसा)+(आदीदो)]	
	हिंसा (हिंसा) 1/1	हिंसा
	आदीदो (आदि) 5/2	वगैरह से
अपडिकम्मं	(अपडिकम्म) 1/1 वि	शारीरिक शृंगार से वियुक्त
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
लिंगं	(लिंग) 1/1	जिन लिंग (भेष)
मुच्छारंभविमुक्कं	[(मुच्छा)+(आरंभविमुक्क)]	
	[(मुच्छा)-(आरंभ)-(विमुक्क) भूकृ 1/1 अनि]	ममत्व बुद्धि एवं सांसारिक क्रियाओं से मुक्त

जुत्तं	(जुत्त) 1/1 वि	युक्त
उवजोगजोगसुद्धीहिं	[(उवजोग)-(जोग)-(सुद्धि) 3/2]	भावों और क्रियाओं की निर्मलता से
लिंगं	(लिंग) 1/1	लिंग (भेष)
ण	अव्यय	नहीं
परावेक्खं	(परावेक्ख) 1/1 वि	पर की चाह रखनेवाला
अपुणब्भवकारणं	[(अपुणब्भव)-(कारण) 1/1]	मोक्ष का कारण
जेण्हं	(जेण्ह) 1/1 वि	जिन

अन्वय- जेण्ह लिंगं हवदि जधजादरूवजादं उप्पाडिदकेसमंसुगं सुद्धं हिंसादीदो रहिदं अप्पडिकम्मं लिंगं अपुणब्भवकारणं मुच्छारंभविमुक्कं उवजोगजोगसुद्धीहिं जुत्तं परावेक्खं ण।

अर्थ- (मोक्ष के साधक का) (जो) (बाह्य) जिन लिंग (भेष) होता है (वह) जैसा जन्म हुआ उसी के अनुरूप शरीर रखा हुआ, दाढी-मूँछ व बाल लोंच किया हुआ, शरीर के दोष से मुक्त, हिंसा वगैरह से रहित, (किसी भी प्रकार के) शारीरिक शृंगार से वियुक्त (होता है) (तथा) (जो) (अंतरंग) (जिन) लिंग (भेष) है, (वह) मोक्ष का कारण (है) ममत्व बुद्धि एवं सांसारिक क्रियाओं से मुक्त (है), भावों और क्रियाओं की निर्मलता से युक्त (है) (तथा) पर की चाह रखनेवाला नहीं (होता है)।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

7. **आदाय तं पि लिंगं गुरुणा परमेणं तं णमंसित्ता।**
सोच्चा सवदं किरियं उवट्ठिदो होदि सो समणो।।

आदाय	(आदा) संकृ	ग्रहण करके
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
पि	अव्यय	ही
लिंगं	(लिंग) 2/1	लिंग
गुरुणा	(गुरु) 3/1	गुरु से
परमेणं	(परम) 3/1 वि	उत्कृष्ट
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
णमंसित्ता	(णमंस) संकृ	नमस्कार करके
सोच्चा	(सोच्चा) संकृ अनि	सुनकर
सवदं	(सवदा) 2/1 वि	व्रत-सहित
किरियं	(किरिया) 2/1	क्रिया को
उवट्ठिदो	(उवट्ठिद) भूकृ 1/1 अनि	तत्पर
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
सो	(त) 1/1 सवि	वह
समणो	(समण) 1/1	श्रमण

अन्वय– परमेणं गुरुणा तं लिंगं आदाय पि तं णमंसित्ता सवदं किरियं सोच्चा सो समणो उवट्ठिदो होदि।

अर्थ– उत्कृष्ट गुरु (आचार्य) से उस लिंग (भेष) को ग्रहण करके ही उन (आचार्य) को नमस्कार करके व्रत (पाँच महाव्रत) सहित क्रिया को सुनकर वह श्रमण (व्रत पालन में) तत्पर होता है।

8. वदसमिदिंदियरोधो लोचावस्सयमचेलमण्हाणं।
खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेगभत्तं च।।

9. एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
तेसु पमत्तो समणो छेदोवट्ठावगो होदि।।

वदसमिदिंदियरोधो	[(वद)-(समिदि)-(इंदियरोध) 1/1]	महाव्रत, समिति, इंद्रियनिरोध
लोचावस्सयम-चेलमण्हाणं	[(लोच)+(आवस्सयं)+(अचेलं)+(अण्हाणं)]	
	[(लोच)-(आवस्सय) 1/1]	लोंच, आवश्यक
	अचेलं (अचेल) 1/1	दिगम्बर अवस्था
	अण्हाणं (अण्हाण) 1/1	स्नान नहीं करना
खिदिसयणमदंतवणं	[(खिदिसयणं)+(अदंतवणं)]	
	खिदिसयणं (खिदिसयण) 1/1	भूमि पर सोना
	अदंतवणं (अदंतवण) 1/1	दाँतौन नहीं करना
ठिदिभोयणमेगभत्तं	[(ठिदिभोयणं)+(एगभत्तं)]	
	ठिदिभोयणं (ठिदिभोयण) 1/1	खड़े होकर भोजन करना
	एगभत्तं (एगभत्त) 1/1	एक बार भोजन करना
च	अव्यय	और
एदे	(एद) 1/2 सवि	ये
खलु	अव्यय	वास्तव में
मूलगुणा	(मूलगुण) 1/2	मूलगुण
समणाणं	(समण) 4/2	श्रमणों के लिए
जिणवरेहिं	(जिणवर) 3/2	जिनवरों के द्वारा

पण्णत्ता	(पण्णत्त) भूक 1/2 अनि	कहे गये
तेसु	(त) 7/2 सवि	उनमें
पमत्तो	(पमत्त) 1/1 वि	प्रमादी
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
छेदोवट्ठावगो	[(छेद)+(उवट्ठावगो)]	
	[(छेद)-(उवट्ठावग) 1/1 वि]	संयम-भंग को फिर स्थापित करनेवाला
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है

अन्वय– वदसमिदिंदियरोधो लोचावस्सयमचेलमण्हाणं खिदिसयणम–दंतवणं ठिदिभोयणमेगभत्तं च एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता तेसु पमत्तो समणो छेदोवट्ठावगो होदि।

अर्थ– (पाँच) महाव्रत[1], (पाँच) समिति[2], (पाँच) इन्द्रियनिरोध[3], लोंच (केशलोंच), (छ) आवश्यक[4], दिगम्बर अवस्था, स्नान नहीं करना (अस्नान), भूमि पर सोना, दाँतौन नहीं करना, खड़े होकर भोजन करना और एक बार भोजन करना- ये (अट्ठाईस) मूलगुण श्रमणों के लिए जिनवरों के द्वारा वास्तव में कहे गये (हैं)। उन (मूलगुणों) में (जो) प्रमादी श्रमण (होता है) (उसके लिए) संयम-भंग को फिर स्थापित करनेवाला (निर्यापक श्रमण) होता है।

---

1. पाँच महाव्रत- अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।
2. पाँच समिति- ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-निक्षेपण और प्रतिष्ठापन।
3. पाँच इन्द्रियनिरोध- स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण।
4. छ आवश्यक- समता, वंदना, स्तुति, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और कायोत्सर्ग।

10. लिंगग्गहणे तेसिं गुरु त्ति पव्वज्जदायगो होदि।
छेदेसूवट्ठवगा सेसा णिज्जावगा समणा।।

लिंगग्गहणे	[(लिंग)-(ग्गहणे) 7/1]	(श्रमण) लिंग ग्रहण में
तेसिं	(त) 6/2 सवि	उनके
गुरु त्ति	[(गुरू)+(इति)]	
	गुरू (गुरु) 1/1	गुरु
	इति (अ) = इस प्रकार	इस प्रकार
पव्वज्जदायगो	[(पव्वज्जा→पव्वज्ज)[1]-	प्रव्रज्या देनेवाले
	(दायग) 1/1 वि]	(दीक्षा देनेवाले)
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
छेदेसूवट्ठवगा[2]	[(छेदेसु)+(उवट्ठावगा)]	
	छेदेसु (छेद) 7/2	संयम-भंग होने पर
	उवट्ठावगा (उवट्ठावग) 1/2 वि	फिर स्थापित
		करनेवाले
सेसा	(सेस) 1/2 वि	अन्य सब
णिज्जावगा	(णिज्जावग) 1/2 वि	निर्यापक
समणा	(समण) 1/2	श्रमण

अन्वय– लिंगग्गहणे तेसिं गुरु त्ति पव्वज्जदायगो होदि छेदेसूवट्ठवगा सेसा समणा णिज्जावगा।

अर्थ– इस प्रकार (साधकों के लिए) (श्रमण) लिंग (भेष) ग्रहण में उनके गुरु प्रव्रज्या देनेवाले (दीक्षा देनेवाले) (आचार्य) (दीक्षागुरु) होते हैं,(तथा) संयम-भंग होने पर फिर (संयम में) स्थापित करनेवाले अन्य सब श्रमण निर्यापक (होते हैं)।

---

1. प्राकृत व्याकरण, पृष्ठ 21
2. यहाँ छन्द की मात्रा के लिए 'उवट्ठावग' का 'उवट्ठवग' किया गया है।

11. पयदम्हि समारद्धे छेदो समणस्स कायचेट्ठम्हि।
जायदि जदि तस्स पुणो आलोयणपुव्विया किरिया।।

12. छेदपउत्तो समणो समणं ववहारिणं जिणमदम्हि।
आसेज्जालोचित्ता उवदिट्ठं तेण कायव्वं।।

पयदम्हि[1]	(पयद) भूकृ 7/1→3/1 अनि	जागरूक द्वारा
समारद्धे	(समारद्ध) भूकृ 7/1 अनि	प्रारंभ की गई
छेदो	(छेद) 1/1	संयम-भंग
समणस्स[2]	(समण) 6/1→3/1	श्रमण द्वारा
कायचेट्ठम्हि	[(काय)-(चेट्ठा) 7/1]	शरीर-क्रिया में
जायदि	(जाय) व 3/1 अक	उत्पन्न होता है
जदि	अव्यय	यदि
तस्स[2]	(त) 6/1→3/1 सवि	उसके द्वारा
पुणो	अव्यय	ही
आलोयणपुव्विया	[(आलोयणा→आलोयण)[3]-	आलोचना की
	(पुव्विया) 1/1 वि]	प्राचीन
किरिया	(किरिया) 1/1	क्रिया

---

1. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-135)
2. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)
3. समासगत शब्दों में स्वर ह्रस्व के स्थान पर दीर्घ और दीर्घ के स्थान पर ह्रस्व हो जाया करते हैं। यहाँ 'आलोयणा' का 'आलोयण' हुआ है। (प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 21)

छेदपउत्ता	[(छेद)-(पउत्त) भकृ 1/1 अनि]	संयम-भंग-युक्त
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
समणं	(समण) 2/1	श्रमण
ववहारिणं	[(ववहारि)-(ण) 2/1 वि]	प्रायश्चित विधान का ज्ञानी
जिणमदम्हि	(जिणमद) 7/1	जिनसिद्धान्त में
आसेज्जालोचित्ता	[(आसेज्ज)+(आलोचित्ता)]	
	आसेज्ज (आस) संकृ	शरण लेकर
	आलोचित्ता (आलोच) संकृ	आलोचना करके
उवदिट्ठं	(उवदिट्ठ) 1/1 वि	उपदिष्ट
तेण	(त) 3/1 सवि	उसके द्वारा
कायव्वं	(का) विधिकृ 1/1	किया जाना चाहिए

अन्वय– पयदम्हि समणस्स समारद्धे कायचेट्ठम्हि जदि छेदो जायदि तस्स पुणो आलोयणपुव्विया किरिया समणो छेदपउत्तो जिणमदम्हि ववहारिणं समणं आसिज्जालोचित्ता तेण उवदिट्ठं कायव्वं।।

अर्थ– जागरूक श्रमण द्वारा प्रारंभ की गई शरीर-क्रिया में यदि संयम-भंग उत्पन्न होता है (तो) उस (श्रमण) के द्वारा ही आलोचना की प्राचीन (पूर्व शास्त्रों के अनुसार) क्रिया (की जानी चाहिये)। (या) (जो) श्रमण संयम-भंग-युक्त (है) (उसे) जिनसिद्धान्त में (प्रतिपादित) प्रायश्चित विधान के ज्ञानी श्रमण की शरण लेकर (अपने दोषों की) (उनके सामने) आलोचना करके उस (श्रमण) के द्वारा (जो कुछ) उपदिष्ट (है) (वह) किया जाना चाहिये।

नोटः सम्पादक द्वारा अनूदित

13. अधिवासे व विवासे छेदविहूणो भवीय सामण्णे।
समणो विहरदु णिच्चं परिहरमाणो णिबंधाणि।।

अधिवासे	(अधिवास) 7/1	(गुरु के) पास में हो
व	अव्यय	अथवा
विवासे	(विवास) 7/1	(गुरु से) दूर हो
छेदविहूणो	[(छेद)-(विहूण) 1/1 वि]	संयम-भंग-रहित
भवीय→भविय	(भव) संकृ	होकर
सामण्णे	(सामण्ण) 7/1	श्रमण अवस्था में
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
विहरदु	(विहर) विधि 3/1 अक	रहे
णिच्चं	अव्यय	सदैव
परिहरमाणो	(परिहर) वकृ 1/1	टालता हुआ
णिबंधाणि	(णिबंध) 2/2	संबंधों/संयोगो को

अन्वय- सामण्णे छेदविहूणो भवीय समणो अधिवासे व विवासे णिच्चं णिबंधाणि परिहरमाणो विहरदु।

अर्थ- श्रमण अवस्था में संयम-भंग-रहित होकर (वह) श्रमण (गुरु के) पास में हो अथवा (गुरु से) दूर (अकेला) हो, सदैव (जन) संबंधों/संयोगो को टालता हुआ रहे।

14. चरदि णिबद्धो णिच्चं समणो णाणम्मि दंसणमुहम्मि।
पयदो मूलगुणेसु य जो सो पडिपुण्णसामण्णो।।

चरदि	(चर) व 3/1 सक	आचरण करता है
णिबद्धो	(णिबद्ध) 1/1 वि	संबद्ध
णिच्चं	अव्यय	सदैव
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
णाणम्मि	(णाण) 7/1	ज्ञान में
दंसणमुहम्मि	[(दंसण)-(मुह) 7/1]	आत्मस्मरण की दिशा में
पयदो	(पयद) भूक 1/1 अनि	जागरूक हुआ
मूलगुणेसु	(मूलगुण) 7/2	मूलगुणों में
य	अव्यय	और
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
सो	(त) 1/1 सवि	वह
पडिपुण्णसामण्णो	[(पडिपुण्ण) भूक अनि-(सामण्ण) 1/1]	परिपूर्ण श्रमणता

अन्वय- जो समणो णिच्चं दंसणमुहम्मि णाणम्मि णिबद्धो य मूलगुणेसु पयदो चरदि सो पडिपुण्णसामण्णो।

अर्थ- जो श्रमण सदैव आत्मस्मरण की दिशा में (तथा) ज्ञान में संबद्ध (है) और मूलगुणों में जागरूक हुआ आचरण करता है, वह परिपूर्ण श्रमणता (प्राप्त किया हुआ है)।

---

1. कोश में 'सामण्ण' शब्द नपुंसकलिंग दिया गया है, किन्त यहाँ 'सामण्ण' शब्द का प्रयोग पुलिंग में किया गया है।

15. भत्ते वा खमणे वा आवसधे वा पुणो विहारे वा।
उवधिम्हि वा णिबद्धं णेच्छदि समणम्हि विकधम्हि।।

भत्ते	(भत्त) 7/1	भोजन में
वा	अव्यय	अथवा
खमणे	(खमण) 7/1	उपवास में
वा	अव्यय	अथवा
आवसधे	(आवसध) 7/1	आवास में
वा	अव्यय	अथवा
पुणो	अव्यय	पादपूरक
विहारे	(विहार) 7/1	विहार में
वा	अव्यय	अथवा
उवधिम्हि	(उवधि) 7/1	परिग्रह में
वा	अव्यय	अथवा
णिबद्धं	(णिबद्ध) 2/1 वि	बँधे हुए/ममता युक्त
णेच्छदि	[(ण)+(इच्छदि)]	
	ण (अ) = नहीं	नहीं
	इच्छदि (इच्छ) व 3/1 सक	स्वीकार करती है
समणम्हि	(समण) 7/1	(अन्य) श्रमण में
विकधम्हि	(विकधा)[1] 7/1	विकथा में

अन्वय- भत्ते वा खमणे वा आवसधे वा पुणो विहारे वा उवधिम्हि वा समणम्हि विकधम्हि णिबद्धं णेच्छदि।

अर्थ- (परिपूर्ण श्रमणता) भोजन में अथवा उपवास में अथवा आवास में अथवा विहार में अथवा (शरीररूप) परिग्रह में अथवा (अन्य) श्रमण में (अथवा) विकथा में बँधे हुए/ममता युक्त (श्रमण) को स्वीकार नहीं करती है।

---

1. कभी-कभी 'आकारान्त' शब्दों के रूप तृतीया और पंचमी को छोड़कर 'अकारान्त' की तरह चल जाते हैं।
अभिनव प्राकृत व्याकरणः पृष्ठ 154

16. अपयत्ता वा चरिया सयणासणठाणचंकमादीसु।
समणस्स सव्वकाले हिंसा सा संतत्तिय त्ति मदा।।

अपयत्ता	(अपयत्ता) 1/1 वि	जागरूकता-रहित
वा	अव्यय	पादपूरक
चरिया	(चरिया) 1/1	चर्या
सयणासणठाण-	[(सयण)+(आसणठाणचंकम)+	
चंकमादीसु	(आदीसु)]	
	[(सयण)-(आसण)-(ठाण)-	सोने, बैठने,खड़े होने,
	(चंकम)-(आदि) 7/2]	परिभ्रमण आदि में
समणस्स	(समण) 6/1	श्रमण की
सव्वकाले	[(सव्व) सवि-(काल) 7/1]	सब काल में
हिंसा	(हिंसा) 1/1	हिंसा
सा	(ता) 1/1 सवि	वह
संतत्तिय त्ति	[(संतत्ता)+(इय)+(इति)]	
	संतत्ता (संतत्ता) 1/1 वि	निरन्तर
	इय (अ) = निश्चय ही	निश्चय ही
	इति (अ) =	वाक्यार्थद्योतक
मदा	(मदा) भूकृ 1/1 अनि	मानी गई

अन्वय- समणस्स अपयत्ता वा चरिया सयणासणठाणचंकमादीसु सव्वकाले सा संतत्तिय त्ति हिंसा मदा।

अर्थ- श्रमण की जागरूकता-रहित चर्या (यदि) सोने, बैठने, खड़े होने, परिभ्रमण आदि (क्रियाओं में) सब काल में (होती है) (तो) वह निश्चय ही निरन्तर हिंसा मानी गई (है)।

17. **मरदु व जियदु व जीवो अयदाचारस्स णिच्छिदा हिंसा।**
पयदस्स णत्थि बंधो हिंसामेत्तेण समिदस्स।।

मरदु	(मर) विधि 3/1 अक	मरे
व	अव्यय	अथवा
जियदु	(जिय) विधि 3/1 अक	जीवे
व	अव्यय	अथवा
जीवो	(जीव) 1/1	जीव
अयदाचारस्स	(अयदाचार) 6/1 वि	जागरूकता-रहित आचरणवाले
णिच्छिदा	(णिच्छिदा) 1/1 वि	निश्चित
हिंसा	(हिंसा) 1/1	हिंसा
पयदस्स	(पयद) 6/1 वि	जागरूक के
णत्थि	अव्यय	नहीं है
बंधो	(बंध) 1/1	बंध
हिंसामेत्तेण	[(हिंसा)-(मेत्त) 3/1 वि]	हिंसामात्र से
समिदस्स	(समिद) 6/1	साधु के

अन्वय– जीवो मरदु व जियदु व अयदाचारस्स समिदस्स हिंसा णिच्छिदा पयदस्स हिंसामेत्तेण बंधो णत्थि।

अर्थ– (कोई भी) जीव मरे अथवा जीवे जागरूकता-रहित आचरणवाले साधु के (आन्तरिक) हिंसा निश्चित (है)। जागरूक (साधु के) (बाह्य) हिंसामात्र से (कर्म) बंध नहीं है।

18. अयदाचारो समणो छस्सु वि कायेसु वधकरो त्ति मदो।
चरदि जदं जदि णिच्चं कमलं व जले णिरुवलेवो।।

अयदाचारो	(अयदाचार) 1/1 वि	जागरूकता-रहित आचरणवाला
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
छस्सु	(छस्सु) 7/2 वि अनि	छ
वि	अव्यय	पादपूरक
कायेसु	(काय) 7/2 वि	कायिक (जीवों) में
वधकरो त्ति	[(वधकरो)+(इति)]	
	वधकरो (वधकर) 1/1 वि	हिंसा करनेवाला
	इति (अ) =	वाक्यार्थद्योतक
मदो	(मद) भूकृ 1/1 अनि	माना गया
चरदि	(चर) व 3/1 सक	आचरण करता है
जदं	(जदं) 2/1 द्वितीयार्थक अव्यय	जागरूकतापूर्वक
जदि	अव्यय	यदि
णिच्चं	अव्यय	सदैव
कमलं	(कमल) 1/1	कमल
व	अव्यय	की तरह
जले	(जल) 7/1	जल में
णिरुवलेवो	(णिरुवलेव) 1/1 वि	अलिप्त

अन्वय- अयदाचारो समणो वि छस्सु कायेसु वधकरो त्ति मदो जदि जदं चरदि णिच्चं जले कमलं व णिरुवलेवो।

अर्थ- जागरूकता-रहित आचरणवाला श्रमण छ कायिक (जीवों) में (बाह्य हिंसा किये बिना भी) (अंतरंग) हिंसा करनेवाला माना गया (है)। यदि (श्रमण) जागरूकतापूर्वक आचरण करता है (और बाह्य हिंसा हो जाती है) (तो) (वह) सदैव जल में कमल की तरह अलिप्त (रहता है)।

19. हवदि व ण हवदि बंधो मदम्हि जीवेऽध कायचेट्ठम्हि।
बंधो धुवमुवधीदो इदि समणा छड्डिया सव्वं।।

हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
व	अव्यय	अथवा
ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
बंधो	(बंध) 1/1	बंध
मदम्हि[1]	(मद) भूकृ 7/1 अनि	मरने पर
जीवेऽध	[(जीवे)+(अध)]	
	जीवे[1] (जीव) 7/1	जीवों के
	अध (अ) = और	और
कायचेट्ठम्हि[2]	[(काय)-(चेट्ठा)7/1→3/1]	शरीर-चेष्टा से
बंधो	(बंध) 1/1	बंध
धुवमुवधीदो	[(धुवं)+(उवधीदो)]	
	धुवं (अ) = निश्चित रूप से	निश्चित रूप से
	उवधीदो (उवधि) 5/1	परिग्रह के कारण
इदि	अव्यय	अतः
समणा	(समण) 1/2	श्रमणों ने
छड्डिया	(छड्ड) भूकृ 1/2	छोड़ दिया
सव्वं	(सव्व) 2/1 सवि	समस्त

अन्वय- कायचेट्ठम्हि जीवेऽध मदम्हि बंधो हवदि व ण हवदि धुवमुवधीदो बंधो इदि समणा सव्वं छड्डिया ।

अर्थ- (और) (श्रमण के) शरीर-चेष्टा से जीवों (त्रस-स्थावर) के मरने पर (कर्म) बंध होता है अथवा नहीं (भी) होता है। (किन्तु) परिग्रह के कारण निश्चित रूप से (कर्म) बंध (होता ही है)। अतः श्रमणों ने समस्त (अंतरंग व बाह्य परिग्रह) छोड़ दिया (है)।

---

1. प्राकृत व्याकरण, पृष्ठ 49
2. कभी-कभी 'आकारान्त' शब्दों के रूप तृतीया और पंचमी को छोड़कर 'अकारान्त' की तरह चल जाते हैं।
   अभिनव प्राकृत व्याकरणः पृष्ठ 154

20. ण हि णिरवेक्खो चागो ण हवदि भिक्खुस्स आसयविसुद्धी।
अविसुद्धस्स य चित्ते कहं णु कम्मक्खओ विहिओ।।

ण	अव्यय	नहीं
हि	अव्यय	निश्चय ही
णिरवेक्खो	(णिरवेक्ख) 1/1 वि	अपेक्षा-रहित
चागो	(चाग) 1/1	त्याग
ण	अव्यय	नहीं है
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
भिक्खुस्स	(भिक्खु) 6/1	श्रमण के
आसयविसुद्धी	[(आसय)-(विसुद्धि) 1/1]	चित्त में विशुद्धता/ स्वच्छता
अविसुद्धस्स	(अविसुद्ध) 6/1→7/1 वि	अविशुद्ध
य	अव्यय	और
चित्ते	(चित्त) 7/1	चित्त में
कहं	अव्यय	कैसे
णु	अव्यय	प्रश्नद्योतक
कम्मक्खओ	[(कम्म)-(क्खअ) 1/1]	कर्मों का अंत
विहिओ	(विहिअ) भूक 1/1 अनि	किया हुआ

अन्वय- भिक्खुस्स चागो णिरवेक्खो ण हवदि हि आसयविसुद्धी ण य अविसुद्धस्स चित्ते कम्मक्खओ कहं णु विहिओ।

अर्थ- (यदि) श्रमण के (परिग्रह का) त्याग अपेक्षा-रहित नहीं होता है (तो) निश्चय ही (उस श्रमण के) चित्त में विशुद्धता/स्वच्छता नहीं है और अविशुद्ध चित्त में कर्मों का अंत किया हुआ कैसे (माना जायेगा)? अर्थात् कर्मों का अंत नहीं हो सकता।

21. किध तम्हि णत्थि मुच्छा आरंभो वा असंजमो तस्स।
तध परदव्वम्मि रदो कधमप्पाणं पसाधयदि।।

किध	अव्यय	कैसे
तम्हि	(त) 7/1 सवि	उस (चाहयुक्त परिग्रह) के होने पर
णत्थि	अव्यय	नहीं है
मुच्छा	(मुच्छा) 1/1	ममत्व भाव
आरंभो	(आरंभ) 1/1	जीव-हिंसा
वा	अव्यय	तथा
असंजमो	(असंजम) 1/1 वि	असंयम
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके
तध	अव्यय	इस प्रकार
परदव्वम्मि	[(पर) वि-(दव्व) 7/1]	पर द्रव्यों में
रदो	(रद) भूक 1/1 अनि	अनुरक्त
कधमप्पाणं	[(कधं)+(अप्पाणं)]	
	कधं (अ) = कैसे	कैसे
	अप्पाणं (अप्पाण) 2/1	आत्मा को
पसाधयदि[1]	(पसाधयदि) व 3/1 सक अनि	प्राप्त करता है

अन्वय– तम्हि तस्स मुच्छा आरंभो वा असंजमो किध णत्थि तध परदव्वम्मि रदो कधमप्पाणं पसाधयदि।

अर्थ– उस (चाहयुक्त परिग्रह) के होने पर उस (श्रमण) के ममत्व भाव, जीव-हिंसा तथा (मूलगुणों में) असंयम कैसे नहीं है? इस प्रकार पर द्रव्यों में अनुरक्त (वह) (श्रमण) आत्मा को कैसे प्राप्त करेगा?

1. प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

22. छेदो जेण ण विज्जदि गहणविसग्गेसु सेवमाणस्स।
समणो तेणिह वट्टदु कालं खेत्तं वियाणित्ता।।

छेदो	(छेद) 1/1	संयम-भंग
जेण	(ज) 3/1 सवि	जिससे
ण	अव्यय	नहीं
विज्जदि	(विज्ज) व 3/1 अक	होता है
गहणविसग्गेसु	[(गहण)-(विसग्ग) 7/2]	स्वीकार करने और त्यागने में
सेवमाणस्स	(सेव) वकृ 6/1	उपभोग करते हुए के
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
तेणिह	[(तेण)+(इह)]	
	तेण (त) 3/1 सवि	उससे
	इह (अ) =	इस लोक में
वट्टदु	(वट्ट) विधि 3/1 सक	रहे
कालं	(काल) 2/1	काल
खेत्तं	(खेत्त) 2/1	क्षेत्र
वियाणित्ता	(वियाण) संकृ	जानकर

अन्वय– सेवमाणस्स गहणविसग्गेसु जेण छेदो ण विज्जदि तेणिह समणो कालं खेत्तं वियाणित्ता वट्टदु।

अर्थ– (परिग्रह का) उपभोग करते हुए (श्रमण) के (परिग्रह को) स्वीकार करने और त्यागने में जिस (परिग्रह) से (मूलगुणों का) संयम-भंग नहीं होता उस (परिग्रह) से (वह) श्रमण काल (और) क्षेत्र को जानकर इस लोक में रहे।

23. **अप्पडिकुट्ठं उवधिं अपत्थणिज्जं असंजदजणेहिं।**
मुच्छादिजणणरहिदं गेण्हदु समणो जदि वि अप्पं।।

अप्पडिकुट्ठं	(अप्पडिकुट्ठ) 2/1 वि	अस्वीकृत नहीं को
उवधिं	(उवधि) 2/1	परिग्रह को
अपत्थणिज्जं	(अपत्थणिज्ज) 2/1 वि	अप्रार्थनीय
असंजदजणेहिं	[(असंजद) वि-(जण) 3/2]	असंयमी मनुष्यों द्वारा
मुच्छादिजणणरहिदं	[(मुच्छा)+(आदि)-(जणणरहिदं)]	
	[(मुच्छा)-(आदि)-(जणण)-(रहिद) 2/1 वि]	ममत्व आदि भावों की उत्पत्ति-रहित को
गेण्हदु	(गेण्ह) विधि 3/1 सक	ग्रहण करे
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
जदि	अव्यय	जो
वि	अव्यय	ही
अप्पं	(अप्प) 2/1 वि	थोड़ा

अन्वय– समणो असंजदजणेहिं अपत्थणिज्जं उवधिं अप्पडिकुट्ठं मुच्छादिजणणरहिदं जदि अप्पं वि गेण्हदु।

अर्थ– श्रमण असंयमी मनुष्यों द्वारा अप्रार्थनीय परिग्रह को, (आगमों द्वारा) अस्वीकृत नहीं को अर्थात् स्वीकृत को (तथा) ममत्व आदि भावों की उत्पत्ति-रहित (मुक्त) (परिग्रह) को जो (बिल्कुल आवश्यकतानुसार) थोड़ा ही हो (उसको) ग्रहण करे।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

24. किं किंचण त्ति तक्कं अपुणब्भवकामिणोध देहे वि।
संग त्ति जिणवरिंदा णिप्पडिकम्मत्तमुद्दिट्ठा।।

किं	(क) 1/1 सवि	क्या
किंचण त्ति	[(किंचण)+(इति)]	
	किंचण (अ) =	थोड़ा सा
	इति (अ) = भी	भी
तक्कं	(तक्क) 1/1	विचार
अपुणब्भवकामिणोध	[(अपुणब्भव)-(कामिणो)+(अध)]	
	[(अपुणब्भव)-(कामि)6/1वि]	मोक्ष के इच्छुक के
	अध (अ) = अब	अब
देहे	(देह) 7/1	देह के विषय में
वि	अव्यय	भी
संग त्ति	[(संगो)+(इति)]	
	संगो (संग) 1/1	आसक्ति
	इति (अ) = इसलिए	इसलिए
जिणवरिंदा	(जिणवरिंद) 1/2	सर्वज्ञ देवों ने
णिप्पडिकम्मत्तमुद्दिट्ठा	[(णिप्पडिकम्मत्तं)+(उद्दिट्ठा)]	
	णिप्पडिकम्मत्तं (णिप्पडिकम्मत्त) 2/1	परिष्कार-रहितता
	उद्दिट्ठा[1] (उद्दिट्ठ) भूकृ 1/2	अनि प्रतिपादित किया

अन्वय– अपुणब्भवकामिणोध किं देहे वि किंचण त्ति तक्कं संग त्ति जिणवरिंदा णिप्पडिकम्मत्तमुद्दिट्ठा।

अर्थ– मोक्ष के इच्छुक (श्रमण) के क्या देह के विषय में अब भी थोड़ा सा भी विचार (आता है) (तो) (वह) (देह में) आसक्ति है। (चूँकि देह में आसक्ति संभव है) इसलिए सर्वज्ञ देवों ने (देह की) परिष्कार-रहितता को प्रतिपादित किया (है)।

---

1. यहाँ भूतकालिक कृदन्त का प्रयोग कर्तृवाच्य में किया गया है।

25. उवयरणं जिणमग्गे लिंगं जहजादरूवमिदि भणिदं।
गुरुवयणं पि य विणओ सुत्तज्झयणं च णिद्दिट्ठं।।

उवयरणं	(उवयरण) 1/1	(मोक्ष का) उपाय/साधन
जिणमग्गे	(जिणमग्ग) 7/1	जिनमार्ग में
लिंगं	(लिंग) 1/1	भेष
जधजादरूवमिदि	[(जधजादरूवं)+(इदि)]	
	[(जध) अ-(जाद) भूकृ-(रूव) 1/1 वि]	जैसा जन्म हुआ वैसा ही शरीररूपी
	इदि (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक
भणिदं	(भण) भूकृ 1/1	कहा गया
गुरुवयणं	[(गुरु)-(वयण) 1/1]	गुरु के द्वारा कथित वचन
पि	अव्यय	भी
य	अव्यय	पादपूरक
विणओ	(विणअ) 1/1	विनय
सुत्तज्झयणं[1]	[(सुत्त)+(अज्झयणं)]	
	[(सुत्त)-(अज्झयण) 1/1]	सूत्रों का अध्ययन
च	अव्यय	और
णिद्दिट्ठं	(णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया

अन्वय- जिणमग्गे जहजादरूवमिदि लिंगं उवयरणं भणिदं गुरुवयणं विणओ च सुत्तज्झयणं पि य णिद्दिट्ठं।

अर्थ- (सर्वज्ञ वीतरागदेव-कथित) जिनमार्ग में (श्रमण का) जैसा जन्म हुआ वैसा ही शरीररूपी भेष (मोक्ष का) उपाय/साधन कहा गया (है)। गुरु के द्वारा कथित वचन, (उनके प्रति) (नियमबद्ध) विनय और सूत्रों का अध्ययन भी (मोक्ष का उपाय/साधन) कहा गया (है)।

नोटः यद्यपि 'विनअ' पुल्लिंग है किन्तु णिद्दिट्ठं निकटतम पद के अनुसार हुआ है।

1. संधि-नियम 8.1 (प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 8)

26. इहलोगणिरावेक्खो अप्पडिबद्धो परम्मि लोयम्हि।
जुत्ताहारविहारो रहिदकसाओ हवे समणो।।

इहलोगणिरावेक्खो	[(इह) अ-(लोग)-(णिरावेक्ख) 1/1 वि]	इस लोक में चाहरहित
अप्पडिबद्धो	(अप्पडिबद्ध) भूकृ 1/1 अनि	नहीं बँधा हुआ
परम्मि[1]	(पर) 7/1→3/1 वि	पर
लोयम्हि[1]	(लोय) 7/1→3/1	लोक द्वारा
जुत्ताहारविहारो	[(जुत्त) वि-(आहार)-(विहार) 1/1]	युक्त आहार-विहार
रहिदकसाओ	[(रहिद) भूकृ अनि-(कसाअ) 1/1]	कषाय त्याग दी गई
हवे[2]	(हव) व 3/1 अक	है
समणो	(समण) 1/1	श्रमण

अन्वय– समणो हवे इहलोगणिरावेक्खो परम्मि लोयम्हि अप्पडिबद्धो जुत्ताहारविहारो रहिदकसाओ।

अर्थ– (वह) श्रमण है (जो) इस लोक में चाहरहित (है), (जो) परलोक द्वारा बँधा हुआ नहीं (है), (जिसका) आहार-विहार युक्त (है) (तथा) (जिसके द्वारा) कषाय त्याग दी गई (है)।

---

1. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-135)
2. प्राकृत भाषाओंका व्याकरण, पिशल, पृ.सं.679।

27. जस्स अणेसणमप्पा तं पि तवो तप्पडिच्छगा समणा।
अण्णं भिक्खमणेसणमध ते समणा अणाहारा।।

जस्स[1]	(जस्स→जेण) 6/1→3/1	चूँकि
	तृतीयार्थक अव्यय	
अणेसणमप्पा	[(अण)+(एसणं)+(अप्पा)]	
	अण (अ) = नहीं	नहीं
	एसणं (एसणा) 2/1	इच्छा
	अप्पा (अप्प) 1/1	आत्मा
तं	अव्यय	इसलिए
पि	अव्यय	ही
तवो	(तव) 1/1	तप
तप्पडिच्छगा	[(त) सवि-(प्पडिच्छग) 1/2 वि]	उसका ग्रहण करनेवाले
समणा	(समण) 1/2	श्रमण
अण्णं	(अण्ण) 2/1	अन्न को
भिक्खमणेसणमध	[(भिक्खं)+(अणेसणं)+(अध)]	
	भिक्खं[2] (भिक्खा) 2/1→7/1	भिक्षा(आहार-प्रक्रिया) में
	अणेसणं (अणेसणा) 2/1	अनिच्छापूर्वक
	द्वितीयार्थक अव्यय	
	अध (अ) = इसलिए	इसलिए
ते	(त) 1/2 सवि	वे
समणा	(समण) 1/2	श्रमण
अणाहारा	(अणाहार) 1/2 वि	निराहारी

अन्वय- जस्स अणेसणमप्पा तं पि तवो तप्पडिच्छगा समणा भिक्खमणेसणमध अण्णं ते समणा अणाहारा।

अर्थ- चूँकि (श्रमण की) आत्मा (पर द्रव्यरूप) (आहार की) इच्छा नहीं (करती है) इसलिए ही (वह) (अंतरंग) तप (कहा गया है) (उसी प्रकार) उस (आहार) का ग्रहण करनेवाले श्रमण भिक्षा (आहार प्रक्रिया) में अन्न को अनिच्छापूर्वक (ही) (ग्रहण करते हैं) इसलिए वे श्रमण निराहारी (कहे गये हैं)। (अतः यह भी अंतरंग तप है)।

---

1. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)
2. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

28. केवलदेहो समणो देहे वि ममत्तरहिदपरिकम्मा।
आजुत्तो तं तवसा अणिगूहिय अप्पणो सत्तिं।।

केवलदेहो	[(केवल) वि -(देह) 1/1]	मात्र देह
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
देहे[1]	(देह) 7/1→3/1	देह से
वि	अव्यय	भी
ममत्तरहिदपरिकम्मा	[(ममत्त)-(रहिद) वि-(परिकम्म) 2/2]	ममत्वरहित क्रियाओं को
आजुत्तो	(आजुत्त) भूक 1/1 अनि	लगाता/नियुक्त
तं	(त) 2/1	उसको
तवसा[2]	(तवसा) 3/1→7/1 अनि	तप में
अणिगूहिय	(अ-णिगूह) संकृ	न छिपाकर
अप्पणो	(अप्प) 6/1	स्वयं की
सत्तिं	(सत्ति) 2/1	शक्ति को

अन्वय- समणो केवलदेहो देहे वि ममत्तरहिदपरिकम्मा अप्पणो सत्तिं अणिगूहिय तं तवसा आजुत्तो।

अर्थ- (जो) श्रमण (परिग्रहरूप में) मात्र देह (रक्खे हुए है) (वह) देह से भी क्रियाओं को ममत्वरहित (होकर) (करता है)। (वही) (श्रमण) स्वयं की शक्ति को न छिपाकर उस (शक्ति) को तप में लगाता (है)/नियुक्त(करता है)।

---

1. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-135)
2. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर तृतीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

29. एक्कं खलु तं भत्तं अप्पडिपुण्णोदरं जहालद्धं।
चरणं भिक्खेण दिवा ण रसावेक्खं ण मधुमंसं।।

एक्कं	(एक्क) 1/1 सवि	एक समय
खलु	अव्यय	पादपूरक
तं	अव्यय	वाक्य-उपन्यास
भत्तं	(भत्त)1/1	आहार
अप्पडिपुण्णोदरं	[(अप्पडिपुण्ण)+(उदरं)]	
	[(अप्पडिपुण्ण) वि-(उदर) 1/1]	पूरा नहीं भरा गया पेट
जहालद्धं	[(जहा) अ-(लद्ध) भूकृ 1/1 अनि]	जैसा प्राप्त किया गया
चरणं	(चरणं) 2/1 द्वितीयार्थक अव्यय	चर्या से
भिक्खेण	(भिक्ख) 3/1	भिक्षा-सहित
दिवा	अव्यय	दिन में
ण	अव्यय	नहीं
रसावेक्खं	[(रस)-(अवेक्खा) 2/1]	रसों की चाह
ण	अव्यय	नहीं
मधुमंसं	[(मधु)-(मंस) 1/1]	मधु-मांस

अन्वय- भत्तं दिवा एक्कं खलु भिक्खेण चरणं जहालद्धं तं ण रसावेक्खं ण मधुमंसं अप्पडिपुण्णोदरं।

अर्थ-(श्रमण के द्वारा) आहार दिन में एक समय भिक्षा-सहित चर्या से जैसा प्राप्त किया गया (है) (वैसा) (ग्रहण किया जाता है) (तथा) (वह श्रमण) रसों की चाह नहीं (रखता है) (और) (उस आहार में) मधु-मांस नहीं (होता है) (तथा) (उस आहार से) पेट पूरा नहीं भरा गया (है)।

30. बालो वा बुड्ढो वा समभिहदो वा पुणो गिलाणो वा।
चरियं चरदु सजोग्गं मूलच्छेदो जधा ण हवदि।।

बालो	(बाल) 1/1	बालक
वा	अव्यय	अथवा
बुड्ढो	(बुड्ढ) 1/1 वि	वृद्ध
वा	अव्यय	अथवा
समभिहदो	(समभिहद) 1/1 वि	श्रम से थका हुआ
वा	अव्यय	अथवा
पुणो	अव्यय	फिर
गिलाणो	(गिलाण) 1/1 वि	अशक्त/रोगी
वा	अव्यय	भी
चरियं	(चरिय) 2/1	आचरण
चरदु	(चर) विधि 3/1 सक	करे
सजोग्गं	(स-जोग्ग) 1/1 वि	अपने योग्य
मूलच्छेदो	(मूलच्छेद) 1/1	मूलगुण-भंग
जधा	अव्यय	जिस तरह से
ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है

अन्वय- बालो वा बुड्ढो वा समभिहदो वा गिलाणो पुणो वा जधा मूलच्छेदो ण हवदि सजोग्गं चरियं चरदु।

अर्थ- (जो श्रमण) बालक अथवा वृद्ध अथवा श्रम से थका हुआ अथवा अशक्त/रोगी (हो) फिर भी (वह) जिस तरह से मूलगुण-भंग नहीं हो (उस तरह से) अपने योग्य आचरण करे।

31. आहारे व विहारे देसं कालं समं खमं उवधिं।
जाणित्ता ते समणो वट्टदि जदि अप्पलेवी सो।।

आहारे	(आहार) 7/1	आहार-चर्या में
व	अव्यय	अथवा
विहारे	(विहार) 7/1	विहार में
देसं	(देस) 2/1	क्षेत्र
कालं	(काल) 2/1	काल
समं	(सम) 2/1	श्रम
खमं	(खम) 2/1 वि	सहनशक्ति
उवधिं	(उवधि) 2/1	शरीरावस्था
जाणित्ता	(जाण) संकृ	जानकर
ते	(त) 2/2 सवि	उन सबको
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
वट्टदि	(वट्ट) व 3/1 सक	आचरण करता है
जदि	अव्यय	यदि
अप्पलेवी	[(अप्प) वि-(लेवी) 1/1 वि अनि]	थोड़े से कर्म से ही बँधनेवाला
सो	(त) 1/1 सवि	वह

अन्वय- जदि समणो आहारे व विहारे देसं कालं समं खमं उवधिं ते जाणित्ता वट्टदि सो अप्पलेवी।

अर्थ- यदि श्रमण आहार-चर्या में अथवा विहार में क्षेत्र, काल, श्रम, सहनशक्ति (तथा) (परिग्रहरूप) शरीरावस्था- उन सबको जानकर आचरण करता है (तो) वह थोड़े से कर्म से ही बँधनेवाला (होता है)।

32. एयग्गगदो समणो एयग्गं णिच्छिदस्स अत्थेसु।
णिच्छित्ती आगमदो आगमचेट्ठा तदो जेट्ठा।।

एयग्गगदो	[(एयग्ग) वि-(गद) भूकृ 1/1 अनि]	एकाग्रचित्त हुआ
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
एयग्गं	(एयग्ग) 2/1 वि	स्थिर
णिच्छिदस्स	(णिच्छिद) भूकृ 6/1→2/1 अनि	निश्चित अवस्था को
अत्थेसु	(अत्थ) 7/2	पदार्थों में
णिच्छित्ती	(णिच्छित्ति) 1/1	निश्चितता
आगमदो	(आगम) 5/1	आगम के अध्ययन के कारण
आगमचेट्ठा	[(आगम)-(चेट्ठा) 1/1]	आगम के अध्ययन में प्रयास
तदो	अव्यय	इसलिए
जेट्ठा	(जेट्ठा) 1/1 वि	सर्वोत्तम

अन्वय- एयग्गगदो समणो अत्थेसु एयग्गं णिच्छिदस्स णिच्छित्ती आगमदो तदो आगमचेट्ठा जेट्ठा।

अर्थ- (जो) एकाग्रचित्त हुआ (है), (वह) श्रमण (है) (क्योंकि) (उसने) पदार्थों में स्थिर (और) निश्चित अवस्था को (प्राप्त किया है) (और) (यह) निश्चितता आगम के अध्ययन के कारण (हुई है)। इसलिए आगम के अध्ययन में प्रयास सर्वोत्तम (है)।

---

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'आगमादो' का 'आगमदो' किया गया है।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

33. आगमहीणो समणो णेवप्पाणं परं वियाणादि।
अविजाणंतो अट्ठे खवेदि कम्माणि किध भिक्खू।।

आगमहीणो	[(आगम)-(हीण) भूकृ 1/1 अनि]	आगम (ज्ञान) के बिना
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
णेवप्पाणं	[(णेव)+(अप्पाणं)]	
	णेव (अ) = नहीं	नहीं
	अप्पाणं (अप्पाण) 2/1	आत्मा को
परं	(पर) 2/1 वि	पर को
वियाणादि[1]	(वियाण) व 3/1 सक	जानता है.
अविजाणंतो	(अ-विजाण) वकृ 1/1	न जानता हुआ
अट्ठे	(अट्ठ) 2/2	पदार्थों को
खवेदि[2]	(खव) व 3/1 सक	नाश करता है
कम्माणि	(कम्म) 2/2	कर्मों
किध	अव्यय	कैसे
भिक्खू	(भिक्खु) 1/1	श्रमण

अन्वय- आगमहीणो समणो णेवप्पाणं परं वियाणादि अट्ठे अविजाणंतो भिक्खू कम्माणि किध खवेदि।

अर्थ- आगम (ज्ञान) के बिना श्रमण आत्मा (स्व) को (और) पर को नहीं जानता है। पदार्थों को न जानता हुआ श्रमण कर्मों का कैसे नाश करेगा?

---

1. वर्तमानकाल के प्रत्ययों के होने पर कभी-कभी अन्त्यस्थ 'अ' के स्थान पर 'आ' हो जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-158 वृत्ति)।
2. प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

34. आगमचक्खू साहू इंदियचक्खूणि सव्वभूदाणि।
देवा य ओहिचक्खू सिद्धा पुण सव्वदो चक्खू।।

आगमचक्खू	[(आगम)-(चक्खु) 1/1]	आगम से ज्ञान
साहू[1]	(साहु) 2/2→7/2	श्रमणों में
इंदियचक्खूणि	[(इंदिय)-(चक्खु) 1/2]	इन्द्रियों से ज्ञान
सव्वभूदाणि[1]	[(सव्व) सवि-(भूद) 2/2→7/2]	समस्त जीवों में
देवा[1]	(देव) 2/2→7/2	देवों में
य	अव्यय	और
ओहिचक्खू	[(ओहि)-(चक्खु) 1/1]	अवधि से ज्ञान
सिद्धा[1]	(सिद्ध) 2/2→7/2	सिद्धों में
पुण	अव्यय	परन्तु
सव्वदो	अव्यय	पूर्णरूप से
चक्खू	(चक्खु) 1/1	ज्ञान

अन्वय- साहू आगमचक्खू सव्वभूदाणि इंदियचक्खूणि य देवा ओहिचक्खू पुण सिद्धा सव्वदो चक्खू।

अर्थ- (मोक्ष-साधक) श्रमणों में आगम से (तत्त्वों का) ज्ञान (घटित होता है), समस्त (संसारी मोहाच्छादित) जीवों में (सीमित मूर्त का) इन्द्रियों से (विविध) ज्ञान (आता है) और देवों में अवधि से (मूर्त का ही) ज्ञान (उत्पन्न होता है) परन्तु (सर्वदर्शी) सिद्धों में पूर्णरूप से (पदार्थों का) ज्ञान (रहता है)।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

35. सव्वे आगमसिद्धा अत्था गुणपज्जएहिं चित्तेहिं।
जाणंति आगमेण हि पेच्छित्ता ते वि ते समणा।।

सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सभी
आगमसिद्धा	[(आगम)-(सिद्ध) 1/2 वि]	आगम से स्थापित
अत्था	(अत्थ) 1/2	पदार्थ
गुणपज्जएहिं	[(गुण)-(पज्जअ) 3/2]	गुण-पर्यायों सहित
चित्तेहिं	(चित्त) 3/2 वि	नाना प्रकार की
जाणंति	(जाण) व 3/2 सक	जानते हैं
आगमेण	(आगम) 3/1	आगम से
हि	अव्यय	निश्चय ही
पेच्छित्ता	(पेच्छ) संकृ	समझकर
ते	(त) 2/2 सवि	उनको
वि	अव्यय	पादपूरक
ते	(त) 1/2 सवि	वे
समणा	(समण) 1/2	श्रमण

अन्वय- सव्वे अत्था चित्तेहिं गुणपज्जएहिं आगमसिद्धा ते आगमेण वि पेच्छित्ता जाणंति ते हि समणा।

अर्थ- सभी (जीव-अजीव) पदार्थ नाना प्रकार की गुण-पर्यायों सहित आगम से स्थापित हैं। (जो) (गुण-पर्यायों सहित) उन (पदार्थों) को आगम से समझकर जानते हैं, वे निश्चय ही श्रमण (हैं)।

36. आगमपुव्वा दिट्ठी ण भवदि जस्सेह संजमो तस्स।
णत्थीदि भणदि सुत्तं असंजदो होदि किध समणो।।

आगमपुव्वा	[(आगम)-(पुव्व)[1] 1/1 वि]	आगम से युक्त/उत्पन्न
दिट्ठी	(दिट्ठि) 1/1	सम्यग्दर्शन
ण	अव्यय	नहीं
भवदि	(भव) व 3/1 अक	होता है
जस्सेह	[(जस्स)+(इह]	
	जस्स (ज) 6/1 सवि	जिसका
	इह (अ) =	इस लोक में
संजमो	(संजम) 1/1	संयमाचरण
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके
णत्थीदि	[(णत्थि)+(इदि]	
	णत्थि (अ) = नहीं है	नहीं है
	इदि (अ) = निश्चय ही	निश्चय ही
भणदि	(भण) व 3/1 सक	कहता है
सुत्तं	(सुत्त) 1/1	सूत्र
असंजदो	(असंजद) 1/1 वि	असंयमी
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
किध	अव्यय	कैसे
समणो	(समण) 1/1	श्रमण

अन्वय- सुत्तं भणदि जस्सेह दिट्ठी आगमपुव्वा ण भवदि तस्स संजमो णत्थीदि असंजदो समणो किध होदि।

अर्थ- सूत्र कहता है- इस लोक में जिस (श्रमण) का सम्यग्दर्शन आगम (अध्ययन) से युक्त/उत्पन्न नहीं है उस (श्रमण) के निश्चय ही संयमाचरण नहीं होता है, (तो) (जो) असंयमी (है) (वह) श्रमण कैसे होगा?

---

1. समास के अन्त में 'पुव्व' शब्द का अर्थ है- 'से युक्त'।

2. प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

37. **ण हि आगमेण सिज्झदि सद्दहणं जदि वि णत्थि अत्थेसु।**
सद्दहमाणो अत्थे असंजदो वा ण णिव्वादि।।

ण	अव्यय	नहीं
हि	अव्यय	ही
आगमेण	(आगम) 3/1	आगम से
सिज्झदि	(सिज्झ) व 3/1 अक	मुक्त होता है
सद्दहणं	(सद्दहण) 2/1	श्रद्धान
जदि	अव्यय	जो
वि	अव्यय	भी
णत्थि	अव्यय	नहीं है
अत्थेसु	(अत्थ) 7/2	पदार्थों में
सद्दहमाणो	(सद्दह) वकृ 1/1	श्रद्धा करता हुआ
अत्थे	(अत्थ) 2/2	पदार्थों
असंजदो	(असंजद) 1/1 वि	असंयमी
वा	अव्यय	और
ण	अव्यय	नहीं
णिव्वादि	(णिव्वा) व 3/1 अक	मुक्त होता है

अन्वय– जदि अत्थेसु सद्दहणं णत्थि आगमेण हि ण सिज्झदि वा अत्थे सद्दहमाणो वि असंजदो ण णिव्वादि।

अर्थ– जो (जीव-अजीव आदि) पदार्थों में श्रद्धान नहीं (करता है) (वह) (केवल) आगम (अध्ययन) से ही मुक्त नहीं होता है। और (जो) पदार्थों की श्रद्धा करता हुआ भी असंयमी (रहता है) (तो) (भी) (वह) मुक्त नहीं होता है।

38. जं अण्णाणी कम्मं खवेदि भवसयसहस्सकोडीहिं।
तं णाणी तिहिं गुत्तो खवेदि उस्सासमेत्तेण।।

जं	(ज) 2/1 सवि	जिस
अण्णाणी	(अण्णाणि) 1/1 वि	अज्ञानी
कम्मं	(कम्म) 2/1	कर्म को
खवेदि	(खव) व 3/1 सक	क्षय करता है
भवसयसहस्स-	[(भव)-(सय)-(सहस्स)-	सौ हजार करोड़ भवों
कोडीहिं[1]	(कोडि) 3/2→7/2]	में
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
णाणी	(णाणी) 1/1 वि	आत्मज्ञानी
तिहिं[2]	(ति) 3/2 वि	तीनों द्वारा
गुत्तो	(गुत्त) भूकृ 1/1 अनि	रक्षित
खवेदि	(खव) व 3/1 सक	क्षय कर देता है
उस्सासमेत्तेण	[(उस्सास)-(मेत्त)	उच्छवास मात्र में
	3/1→7/1 वि]	

अन्वय–अण्णाणी जं कम्मं भवसयसहस्सकोडीहिं खवेदि तिहिं गुत्तो णाणी तं उस्सासमेत्तेण खवेदि।

अर्थ– अज्ञानी (व्यक्ति) जिस कर्म को सौ हजार करोड़ भवों में क्षय करता है तीनों (मन, वचन और काय) द्वारा रक्षित आत्मज्ञानी (व्यक्ति) उस (कर्म) को उच्छवास मात्र में क्षय कर देता है।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर तृतीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 37)
2. यहाँ छन्दपूर्ति के लिए 'तीहिं' के स्थान पर 'तिहिं' किया गया है। किन्तु यहाँ पाठ 'तिहिं' के स्थान पर 'तिहि' होना चाहिये।

39. परमाणुपमाणं वा मुच्छा देहादिएसु जस्स पुणो।
विज्जदि जदि सो सिद्धिं ण लहदि सव्वागमधरो वि।।

परमाणुपमाणं	[(परमाणु)-(पमाण) 1/1]	परमाणु परिमाण
वा	अव्यय	भी
मुच्छा	(मुच्छा) 1/1	मोह/आसक्ति
देहादिएसु	[(देह)+(आदिएसु)]	
	[(देह)-(आदिअ) 7/2]	देहादि में
	'अ' स्वार्थिक	
जस्स	(ज) 6/1 सवि	जिसके
पुणो	अव्यय	परन्तु
विज्जदि	(विज्ज) व 3/1 अक	विद्यमान है
जदि	अव्यय	यदि
सो	(त) 1/1 सवि	वह
सिद्धिं	(सिद्धि) 2/1	सिद्धि को
ण	अव्यय	नहीं
लहदि	(लह) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
सव्वागमधरो	[(सव्व)+(आगमधरो)]	
	[(सव्व) सवि-(आगम)-	समस्त आगम को
	(धर) 1/1 वि]	धारण करनेवाला
वि	अव्यय	भी

अन्वय- पुणो जस्स जदि परमाणुपमाणं वि देहादिएसु मुच्छा विज्जदि सो सव्वागमधरो वा सिद्धिं ण लहदि।

अर्थ- परन्तु जिस (श्रमण) के यदि परमाणु परिमाण भी देहादि (पर द्रव्यों) में मोह/आसक्ति विद्यमान है (तो) वह (श्रमण) समस्त आगम को धारण करनेवाला (जाननेवाला) (होता हुआ) भी सिद्धि को प्राप्त नहीं करता है।

40. पंचसमिदो तिगुत्तो पंचेंदियसंवुडो जिदकसाओ।
दंसणणाणसमग्गो समणो सो संजदो भणिदो।।

पंचसमिदो	[(पंच) वि-(समिद) 1/1 वि]	पाँच प्रकार से सावधान
तिगुत्तो	[(ति) वि-(गुत्त) 1/1 वि]	तीन प्रकार से संयत
पंचेंदियसंवुडो	[(पंच) वि-(इंदिय)-(संवुड) भूकृ 1/1 अनि]	पाँचों इन्द्रियाँ नियन्त्रित की गई
जिदकसाओ	[(जिद) भूकृ अनि-(कसाअ) 1/1]	जीत ली गई है कषाय
दंसणणाणसमग्गो	[(दंसण)-(णाण)-(समग्ग) 1/1 वि]	दर्शन और ज्ञान से पूर्ण
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
सो	(त) 1/1 सवि	वह
संजदो	(संजद) 1/1 वि	संयमी
भणिदो	(भण) भूकृ 1/1	कहा गया

अन्वय- पंचसमिदो तिगुत्तो पंचेंदियसंवुडो जिदकसाओ दंसणणाण-समग्गो सो समणो संजदो भणिदो।

अर्थ- (जो) (श्रमण) पाँच प्रकार से सावधान (है) अर्थात् सावधानी पूर्वक) पाँच (ईया, भाषा, एषणा आदि) समितियों का पालन करनेवाला है, तीन प्रकार से संयत (है) अर्थात् मन, वचन और काय के संयम के कारण तीन गुप्ति सहित है, (जिसके द्वारा) पाँचों (स्पर्शन, रसना आदि) इन्द्रियाँ नियंत्रित की गई (हैं), कषाय जीत ली गई (है) (तथा) (जो) दर्शन (शुद्धात्म-श्रद्धा) और ज्ञान (स्व-दृष्टि) से पूर्ण है, वह श्रमण संयमी कहा गया (है)।

41. समसत्तुबंधुवग्गो समसुहदुक्खो पसंसणिंदसमो।
समलोट्ठुकंचणो पुण जीविदमरणे समो समणो।।

समसत्तुबंधुवग्गो	[(सम) वि-(सत्तु)-(बंधुवग्ग) 1/1]	समान, शत्रु और बंधुसमूह
समसुहदुक्खो	[(सम) वि-(सुह)-(दुक्ख) 1/1]	समान, सुख-दुख
*पसंसणिंदसमो	[(पसंसा)-(णिंदा)-(सम) 1/1 वि]	प्रशंसा-निंदा समान
समलोट्ठुकंचणो	[(सम) वि-(लोट्ठु)-(कंचण) 1/1 वि]	समान, मिट्टी का ढेला और सोना
पुण	अव्यय	और
जीविदमरणे	[(जीविद)-(मरण) 7/1]	जीवन-मरण में
समो	(सम) 1/1 वि	समान
समणो	(समण) 1/1	श्रमण

अन्वय–समसत्तुबंधुवग्गो समसुहदुक्खो पसंसणिंदसमो समलोट्ठुकंचणो पुण जीविदमरणे समो समणो।

अर्थ– (जिसके लिए) शत्रु और बंधुसमूह समान (है), सुख-दुख समान (है), प्रशंसा-निंदा समान (है), मिट्टी का ढेला और सोना समान (है) और (जो) जीवन-मरण में समान (है) (वह) श्रमण (है)।

---

* समास में 'पसंसा' का 'पसंस' तथा 'णिंदा' का 'णिंद' किया गया है। (प्राकृत व्याकरण, पृष्ठ 21)

42. दंसणणाणचरित्तेसु तीसु जुगवं समुट्ठिदो जो दु।
एयग्गगदो त्ति मदो सामण्णं तस्स पडिपुण्णं।।

दंसणणाणचरित्तेसु	[(दंसण)-(णाण)-(चरित्त) 7/2]	सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र में
तीसु	(ति) 7/2 वि	तीनों में
जुगवं	अव्यय	एक ही साथ
समुट्ठिदो	(समुट्ठिद) भूक 1/1 अनि	उचित प्रकार से प्रयत्नशील
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
दु	अव्यय	ही
एयग्गगदो त्ति	[(एयग्गगदो)+(इति)]	
	[(एयग्ग) वि-(गद) भूक 1/1 अनि]	एकाग्रचित्त हुआ
	इति (अ) = अतः	अतः
मदो	(मद) भूक 1/1 अनि	माना गया
सामण्णं	(सामण्ण) 1/1	श्रमणता
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके
पडिपुण्णं	(पडिपुण्ण) 1/1 वि	परिपूर्ण

अन्वय– जो दंसणणाणचरित्तेसु तीसु जुगवं समुट्ठिदो दु एयग्गगदो त्ति मदो तस्स पडिपुण्णं सामण्णं ।

अर्थ– जो (श्रमण) सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र (इन) तीनों में एक ही साथ उचित प्रकार से प्रयत्नशील (है) (वह) ही (मोक्ष प्राप्त करने के लिए) एकाग्रचित्त हुआ माना गया (है) अतः उसके (ही) परिपूर्ण श्रमणता (है)।

43. मुज्झदि वा रज्जदि वा दुस्सदि वा दव्वमण्णमासेज्ज।
जदि समणो अण्णाणी बज्झदि कम्मेहिं विविहेहिं।।

मुज्झदि	(मुज्झ) व 3/1 अक	मूर्च्छित होता है
वा	अव्यय	विकल्प बोधक अव्यय
रज्जदि	(रज्ज) व 3/1 अक	आसक्त होता है
वा	अव्यय	विकल्प बोधक अव्यय
दुस्सदि	(दुस्स) व 3/1 सक	द्वेष करता है
वा	अव्यय	तथा
दव्वमण्णमासेज्ज	[(दव्वं)+(अण्णं)+ (आसेज्ज)]	
	दव्वं (दव्व) 2/1	द्रव्य को
	अण्णं (अण्ण) 2/1 वि	पर
	आसेज्ज (आस) संकृ	प्राप्त करके
जदि	अव्यय	यदि
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
अण्णाणी	(अण्णाणि) 1/1 वि	अज्ञानी
बज्झदि	(बज्झदि) व कर्म 3/1 अनि	बाँधा जाता है
कम्मेहिं	(कम्म) 3/2	कर्मों से
विविहेहिं	(विविह) 3/2 वि	अनेक प्रकार

अन्वय– जदि समणो दव्वमण्णमासेज्ज मुज्झदि वा रज्जदि वा दुस्सदि वा अण्णाणी विविहेहिं कम्मेहिं बज्झदि।

अर्थ– यदि श्रमण पर द्रव्य को प्राप्त करके (उसमें) मूर्च्छित (आत्मविस्मृत) होता है, (उसमें) आसक्त होता है तथा (उससे) द्वेष करता है (तो) (वह) अज्ञानी (है) (और) (इसलिए) अनेक प्रकार के कर्मों से बाँधा जाता है।

44. अट्ठेसु जो ण मुज्झदि ण हि रज्जदि णेव दोसमुवयादि।
समणो जदि सो णियदं खवेदि कम्माणि विविहाणि।।

अट्ठेसु	(अट्ठ) 7/2	पदार्थों के मध्य
जो	(ज) 1/1 सवि	जो कोई
ण	अव्यय	नहीं
मुज्झदि	(मुज्झ) व 3/1 अक	मोहित होता है
ण	अव्यय	नहीं
हि	अव्यय	भी
रज्जदि	(रज्ज) व 3/1 अक	आसक्त होता है
णेव	अव्यय	नहीं
दोसमुवयादि	[(दोसं)+(उवयादि)]	
	दोसं (दोस) 2/1	द्वेष भाव
	उवयादि (उवया) व 3/1 सक	रखता है
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
जदि	अव्यय	यदि
सो	(त) 1/1 सवि	वह
णियदं	अव्यय	आवश्यकरूप से
खवेदि	(खव) व 3/1 सक	क्षय करता है
कम्माणि	(कम्म) 2/2	कर्मों को
विविहाणि	(विविह) 2/2 वि	अनेक प्रकार के

अन्वय– जदि जो समणो अट्ठेसु ण मुज्झदि ण रज्जदि णेव दोसमुवयादि हि सो णियदं विविहाणि कम्माणि खवेदि।

अर्थ– यदि जो कोई श्रमण (पर) पदार्थों के मध्य मोहित नहीं होता है अर्थात् उनके मध्य आत्मविस्मरण किया हुआ नहीं रहता है (उनमें) आसक्त नहीं होता है (तथा) (उनमें) द्वेष भाव भी नहीं रखता है (तो) वह आवश्यकरूप से अनेक प्रकार के कर्मों का क्षय करता है।

45. समणा सुद्धुवजुत्ता सुहोवजुत्ता य होंति समयम्हि।
तेसु वि सुद्धुवजुत्ता अणासवा सासवा सेसा।।

समणा	(समण) 1/2	श्रमण
सुद्धुवजुत्ता	[(सुद्ध)+(उवजुत्ता)]	
	[(सुद्ध) वि-(उवजुत्त) भूकृ 1/2 अनि]	शुद्ध में संलग्न
सुहोवजुत्ता	[(सुह)+(उवजुत्ता)]	
	[(सुह) वि-(उवजुत्त) भूकृ 1/2 अनि]	शुभ में संलग्न
य	अव्यय	और
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं
समयम्हि	(समय) 7/1	आगम में
तेसु	(त) 7/2 सवि	उनमें
वि	अव्यय	भी
सुद्धुवजुत्ता	[(सुद्ध)+(उवजुत्ता)]	
	[(सुद्ध) वि-(उवजुत्त) भूकृ 1/2 अनि]	शुद्ध में संलग्न
अणासवा	(अणासव) 1/2 वि	कर्मास्रव-रहित
सासवा	(सासव) 1/2 वि	कर्मास्रव-सहित
सेसा	(सेस) 1/2 वि	बाकी

अन्वय– समयम्हि समणा होंति सुद्धुवजुत्ता य सुहोवजुत्ता तेसु वि सुद्धुवजुत्ता अणासवा सेसा सासवा।

अर्थ– आगम में श्रमण (दो प्रकार के) होते हैं- शुद्ध में संलग्न अर्थात् शुद्धोपयोगी और शुभ में संलग्न अर्थात् शुभोपयोगी। उनमें भी (जो) (श्रमण) शुद्ध में संलग्न अर्थात् शुद्धोपयोगी (हैं) (वे) कर्मास्रव-रहित (होते हैं) (तथा) बाकी (जो श्रमण शुभ में संलग्न अर्थात् शुभोपयोगी हैं)(वे)कर्मास्रव-सहित(होते हैं)।

46. अरहंतादिसु भत्ती वच्छलदा पवयणाभिजुत्तेसु।
विज्जदि जदि सामण्णे सा सुहजुत्ता भवे चरिया।।

अरहंतादिसु	[(अरहंत)+(आदिसु)]	
	[(अरहंत)-(आदि) 7/2]	अरहंतादि में
भत्ती	(भत्ति) 1/1	भक्ति
वच्छलदा	(वच्छलदा) 1/1	वात्सल्य भाव/ अनुराग भाव
पवयणाभिजुत्तेसु	[(पवयण)+(अभिजुत्तेसु)]	
	[(पवयण)-(अभिजुत्त) भूकृ 7/2 अनि]	आगम-ज्ञान में संलग्न (श्रमणों) में
विज्जदि	(विज्ज) व 3/1 अक	होती है
जदि	अव्यय	यदि
सामण्णे	(सामण्ण) 7/1	श्रमण अवस्था में
सा	(ता) 1/1 सवि	वह
सुहजुत्ता	[(सुह) वि-(जुत्ता) भूकृ 1/1अनि]	शुभ-युक्त/शुभोपयोगी
भवे	(भव) व 3/1 अक	होती है
चरिया	(चरिया) 1/1	चर्या

अन्वय- जदि सामण्णे अरहंतादिसु भत्ती विज्जदि पवयणाभिजुत्तेसु वच्छलदा सा चरिया सुहजुत्ता भवे।

अर्थ- यदि श्रमण अवस्था में अरहंतादि में भक्ति होती है (और) आगम-ज्ञान में संलग्न (श्रमणों) में/के प्रति वात्सल्य भाव/अनुराग भाव (होता है) (तो) (श्रमण की) वह चर्या शुभ-युक्त/शुभोपयोगी होती है।

47. **वंदणणमंसणेहिं अब्भुट्ठाणाणुगमणपडिवत्ती।**
समणेसु समावणओ ण णिंदिदा रायचरियम्हि।।

वंदणणमंसणेहिं	[(वंदण)-(णमंसण) 3/2]	स्तुति और नमन सहित
अब्भुट्ठाणाणुगमण-पडिवत्ती	[(अब्भुट्ठाण)+(अणुगमण-पडिवत्ती)]	
	[(अब्भुट्ठाण)-(अणुगमण)-(पडिवत्ति) 1/2]	सम्मान के लिए खड़े होना, पीछे-पीछे चलने की प्रवृत्तियाँ
समणेसु	(समण) 7/2	श्रमणों में
समावणओ	[(सम)+(अवणओ)]	
	[(सम)-(अवणअ) 1/1]	कष्टों का निराकरण करना
ण	अव्यय	नहीं
णिंदिदा	(णिंद) भूकृ 1/2	अस्वीकृत
रायचरियम्हि[1]	[(राय)-(चरिया) 7/1]	सरागचारित्र अवस्था में

अन्वय- समणेसु समावणओ वंदणणमंसणेहिं अब्भुट्ठाणाणुगमण-पडिवत्ती रायचरियम्हि ण णिंदिदा।

अर्थ- श्रमणों में (विद्यमान) कष्टों का निराकरण करना, स्तुति और नमन सहित (उनके आगमन पर) सम्मान के लिए खड़े होना, (उनके जाने पर) उनके पीछे-पीछे चलना-(ये सब) प्रवृत्तियाँ (शुभोपयोगी श्रमण की) सरागचारित्र अवस्था में अस्वीकृत नहीं (है)।

---

1. कभी-कभी 'आकारान्त' शब्दों के रूप तृतीया और पंचमी को छोड़कर 'अकारान्त' की तरह चल जाते हैं।
अभिनव प्राकृत व्याकरणः पृष्ठ 154

48. **दंसणणाणुवदेसो सिस्सग्गहणं च पोसणं तेसिं।**
चरिया हि सरागाणं जिणिंदपूजोवदेसो य।।

दंसणणाणुवदेसो	[(दंसणणाण)+(उवदेसो)] [(दंसण)-(णाण)-(उवदेस) 1/1]	सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान का जन-शिक्षण
सिस्सग्गहणं	[(सिस्स)-(गहण) 1/1]	शिष्यों का ग्रहण
च	अव्यय	और
पोसणं	(पोषण) 1/1	विकास/पुष्टि
तेसिं	(त) 6/2 सवि	उनका
चरिया	(चरिया) 1/1	चर्या
हि	अव्यय	निश्चय ही
सरागाणं	(सराग) 6/2 वि	सरागों (शुभोपयोगी श्रमणों) की
जिणिंदपूजोवदेसो	[(जिणिंदपूजा)+(उवदेसो)] [(जिणिंद)-(पूजा)-(उवदेस) 1/1]	जिनेन्द्र देव की पूजा/भक्ति का उपदेश
य	अव्यय	तथा

अन्वय- दंसणणाणुवदेसो सिस्सग्गहणं च तेसिं पोसणं य जिणिंद-पूजोवदेसो सरागाणं हि चरिया।

अर्थ- सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान का जन-शिक्षण, शिष्यों का ग्रहण और उनका विकास/पुष्टि (करना) तथा जिनेन्द्र देव की पूजा/भक्ति का (सर्वोपयोगी) उपदेश-(ये सब) सरागों (शुभोपयोगी श्रमणों) की निश्चय ही चर्या है।

49. उवकुणदि जो वि णिच्चं चादुव्वण्णस्स समणसंघस्स।
कायविराधणरहिदं सो वि सरागप्पधाणो से।।

उवकुणदि	(उवकुण) व 3/1 सक	उपकृत करता है
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
वि	अव्यय	ही
णिच्चं	अव्यय	सदैव
चादुव्वण्णस्स	(चादुव्वण्ण) 6/1→2/1 वि	चार प्रकार के
समणसंघस्स	[(समण)-(संघ) 6/1→2/1]	श्रमण संघ को
कायविराधणरहिदं[1]	[(काय)-(विराधण)-(रहिद) 2/1 वि]	छ काय के जीवों की पीड़ा के बिना
सो	(त) 1/1 सवि	वह
वि	अव्यय	भी
सरागप्पधाणो	[(सराग) वि-(प्पधाण) 1/1 वि]	राग-सहित चर्या में मुख्य
से	अव्यय	वाक्य का उपन्यास

अन्वय– चादुव्वण्णस्स समणसंघस्स जो णिच्चं कायविराधणरहिदं उवकुणदि सो सरागप्पधाणो वि वि से।

अर्थ– चार प्रकार के श्रमण संघ को जो सदैव छ काय के जीवों की पीड़ा के बिना उपकृत करता है, वह राग-सहित चर्या में मुख्य (सर्वोत्तम) (होकर) भी (शुभोपयोगी) ही है।

---

1. 'बिना' के योग में द्वितीया, तृतीया तथा पंचमी विभक्ति का प्रयोग होता है।

50. जदि कुणदि कायखेदं वेज्जावच्चत्थमुज्जदो समणो।
ण हवदि हवदि अगारी धम्मो सो सावयाणं से।।

जदि	अव्यय	यदि
कुणदि	(कुण) व 3/1 सक	करता है
कायखेदं	[(काय)-(खेद) 2/1]	षट्काय जीवों में दुख
वेज्जावच्चत्थमुज्जदो	[(वेज्जावच्चत्थं)+(उज्जदो)]	
	वेज्जावच्चत्थं[1] (अ) = उज्जदो(उज्जद) भूकृ 1/1अनि	वैयावृत्ति के लिए लगा हुआ
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
अगारी	(अगारि) 1/1 वि	गृहस्थ
धम्मो	(धम्म) 1/1	जीवन-पद्धति
सो	(त) 1/1 सवि	वह
सावयाणं	(सावय) 6/2	श्रावकों की
से	अव्यय	वाक्य का उपन्यास

अन्वय– वेज्जावच्चत्थमुज्जदो जदि कायखेदं कुणदि समणो ण हवदि अगारी हवदि सो सावयाणं धम्मो से।

अर्थ–(अन्य श्रमणों की) वैयावृत्ति के लिए लगा हुआ (जो) (शुभोपयोगी श्रमण है) (वह) यदि षट्काय जीवों में दुख (उत्पन्न) करता है (तो) (वह) श्रमण नहीं है गृहस्थ है (क्योंकि) वह श्रावकों (गृहस्थों) की (जीवों को दुख देने की) (विवशता पूर्ण) जीवन-पद्धति (है)।

---

1. 'अत्थं' अव्यय का प्रयोग 'के लिए' अर्थ में होता है।

51. जोण्हाणं णिरवेक्खं सागारणगारचरियजुत्ताणं।
अणुकंपयोवयारं कुव्वदु लेवो जदि वि अप्पो।।

जोण्हाणं	(जोण्ह) 6/2 वि	जिन मार्गानुयायियों का
णिरवेक्खं	(णिरवेक्ख) 2/1 वि	अपेक्षा-रहित
सागारणगारचरिय-	[(सागार) वि-(अणगार) वि-	गृहस्थ और श्रमणों
जुत्ताणं	(चरिया)-(जुत्त)	की चर्या से युक्त
	भूकृ 6/2 अनि]	
अणुकंपयोवयारं	[(अणुकंपया)+(उवयारं)]	
	अणुकंपया(अणुकंपया)3/1 अनि	अनुकंपापूर्वक
	तृतीयार्थक अव्यय	
	उवयारं (उवयार) 2/1	उपकार
कुव्वदु	(कुव्व) विधि 3/1 सक	करे
लेवो	(लेव) 1/1	कर्मलेप
जदि	अव्यय	यदि
वि	अव्यय	भी
अप्पो	(अप्प) 1/1 वि	थोड़ा

अन्वय– सागारणगारचरियजुत्ताणं जोण्हाणं णिरवेक्खं अणुकंपयोवयारं कुव्वदु जदि अप्पो वि लेवो।

अर्थ– (शुभोपयोगी श्रमण) गृहस्थ और श्रमणों की चर्या से युक्त जिन मार्गानुयायियों (गृहस्थ और श्रमणों) का अपेक्षा-रहित अनुकंपापूर्वक उपकार करे, यदि थोड़ा भी कर्मलेप (होता है) (तो भी) (करे)।

52. रोगेण वा छुधाए तण्हाए वा समेण वा रूढं।
दिट्ठा समणं साहू पडिवज्जदु आदसत्तीए।।

रोगेण	(रोग) 3/1	रोग से
वा	अव्यय	अथवा
छुधाए	(छुधा) 3/1	भूख से
तण्हाए	(तण्हा) 3/1	प्यास से
वा	अव्यय	अथवा
समेण	(सम) 3/1	कष्ट से
वा	अव्यय	अथवा
रूढं	(रूढ) भूकृ 2/1 अनि	लदे हुए
दिट्ठा	(दिट्ठा) संकृ अनि	देखकर
समणं	(समण) 2/1	श्रमण को
साहू	(साहु) 1/1	श्रमण
पडिवज्जदु	(पडिवज्ज) विधि 3/1 सक	अंगीकार करे
आदसत्तीए	(आदसत्तीए) 3/1	अपनी शक्तिपूर्वक
	तृतीयार्थक अव्यय	

अन्वय- साहू रोगेण वा छुधाए वा तण्हाए वा समेण रूढं समणं दिट्ठा आदसत्तीए पडिवज्जदु।

अर्थ- (शुभोपयोगी) श्रमण रोग से अथवा भूख से अथवा प्यास से अथवा कष्ट से लदे हुए (पीड़ित) श्रमण को देखकर अपनी शक्तिपूर्वक (सहायता करने के लिए उनको) अंगीकार करे।

53. वेज्जावच्चणिमित्तं गिलाणगुरुबालवुड्ढसमणाणं।
लोगिगजणसंभासा ण णिंदिदा वा सुहोवजुदा।।

वेज्जावच्चणिमित्तं	[(वेज्जावच्च)-(णिमित्त) 1/1]	वैयावृत्ति के निमित्त
गिलाणगुरुबालवुड्ढ-समणाणं	[(गिलाण) वि-(गुरु)-(बाल)-(वुड्ढ) वि-(समण) 6/2]	रोगी, पूज्य, बाल और वृद्ध श्रमणों की
लोगिगजणसंभासा	[(लोगिग) वि-(जण)-(संभासा) 1/1]	सांसारिक व्यक्तियों से वार्तालाप
ण	अव्यय	नहीं
णिंदिदा	(णिंदिदा) भूकृ 1/1	अस्वीकृत
वा	अव्यय	पादपूरक
सुहोवजुदा	[(सुह)+(उवजुदा)] [(सुह) वि-(उवजुदा) भूकृ 1/1 अनि]	शुभ और उचित

अन्वय- गिलाणगुरुबालवुड्ढसमणाणं वेज्जावच्चणिमित्तं लोगिग-जणसंभासा सुहोवजुदा वा ण णिंदिदा।

अर्थ- रोगी, पूज्य, बाल (आयु में छोटे), वृद्ध (आयु में बड़े) श्रमणों की वैयावृत्ति के निमित्त सांसारिक व्यक्तियों से शुभ और उचित वार्तालाप (श्रमणों के लिए) अस्वीकृत नहीं (है)।

54. एसा पसत्थभूदा समणाणं वा पुणो घरत्थाणं।
चरिया परेत्ति भणिदा ताएव परं लहदि सोक्खं।।

एसा	(एता) 1/1 सवि	यह
पसत्थभूदा	[(पसत्थ) वि-(भूदा) भूकृ 1/1]	प्रशंसनीय हुई/बनी
समणाणं	(समण) 4/2	श्रमणों के लिए
वा	अव्यय	पादपूरक
पुणो	अव्यय	और
घरत्थाणं	(घरत्थ) 4/2	गृहस्थों के लिए
चरिया	(चरिया) 1/1	चर्या
परेत्ति	[(परा)+(इति)]	
	परा (परा) 1/1 वि	उत्कृष्ट
	इति (अ) = क्योंकि	क्योंकि
भणिदा	(भण) भूकृ 1/1	कही गई
ताएव	ता (अ) = उससे	उससे
	एव (अ) = ही	ही
परं	(पर) 2/1 वि	उत्कृष्ट
लहदि	(लह) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
सोक्खं	(सोक्ख) 2/1	सुख को

अन्वय- समणाणं एसा चरिया पसत्थभूदा वा पुणो घरत्थाणं परेत्ति भणिदा ताएव परं सोक्खं लहदि।

अर्थ- श्रमणों के लिए यह (शुभोपयोगी) चर्या प्रशंसनीय हुई/बनी (है) और गृहस्थों के लिए (यह शुभोपयोगी चर्या) उत्कृष्ट कही गई (है) क्योंकि (गृहस्थ) उससे (उस चर्या से) ही उत्कृष्ट सुख को प्राप्त करता है।

55. रागो पसत्थभूदो वत्थुविसेसेण फलदि विवरीदं।
णाणाभूमिगदाणिह बीजाणिव सस्सकालम्हि।।

रागो	(राग) 1/1	राग
पसत्थभूदो	[(पसत्थ) वि-(भूद) भूकृ 1/1]	प्रशंसनीय हुआ
वत्थुविसेसेण	[(वत्थु)-(विसेस) 3/1]	पदार्थ भेद के कारण
फलदि	(फल) व 3/1 सक	फल उत्पन्न करता है
विवरीदं	(विवरीद) 2/1 वि	विपरीत
णाणाभूमिगदाणिह	[(णाणाभूमिगदाणि)-(ह)]	
	[(णाणा) वि-(भूमि)-(गद) भूकृ 1/2 अनि]	नाना प्रकार की भूमि में बोये गये
	ह (अ) =	पादपूरक
बीजाणिव	[(बीजाणि)-(व)]	
	(बीज) 1/2	बीज
	व (अ) = जैसे कि	जैसे कि
सस्सकालम्हि	[(सस्स)-(काल) 7/1]	खेती के समय में

अन्वय- रागो पसत्थभूदो वत्थुविसेसेण विवरीदं फलदि बीजाणिव सस्सकालम्हि णाणाभूमिगदाणिह।

अर्थ- (यद्यपि) (शुभोपयोगी) राग प्रशंसनीय हुआ (है), (तो भी) पदार्थ भेद के कारण (राग) विपरीत फल (भी) (उसी प्रकार) उत्पन्न करता है जैसे कि बीज (जो) खेती के समय में नाना प्रकार की (उपजाऊ-अनुपजाऊ) भूमि में बोये गये (हैं) (और) (फल को उत्पन्न करते हैं।)

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

56. छदुमत्थविहिदवत्थुसु वदणियमज्झयणझाणदाणरदो।
ण लहदि अपुणब्भावं भावं सादप्पगं लहदि।।

छदुमत्थविहिद-	[(छदुमत्थ) वि-	अल्पज्ञानियों द्वारा
वत्थुसु	(विहिद) भूकृ अनि-	स्थिर की हुई
	(वत्थु) 7/2→3/2]	योजना के कारण
वदणियमज्झयण-	[(वदणियम)+(अज्झयण-	
झाणदाणरदो[1]	झाणदाणरद)]	
	[(वद)-(णियम)-(अज्झयण)-	व्रत, नियम, अध्ययन
	(झाण)-(दाण)-(रद)	ध्यान और दान में
	भूकृ 1/1 अनि]	संलग्न
ण	अव्यय	नहीं
लहदि	(लह) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
अपुणब्भावं	(अपुणब्भाव) 2/1	मोक्ष को
भावं	(भाव) 2/1	अवस्था को
सादप्पगं	[(साद)-(अप्पग) 2/1 वि]	सुखात्मक
लहदि	(लह) व 3/1 सक	प्राप्त करता है

अन्वय– छदुमत्थविहिदवत्थुसु वदणियमज्झयणझाणदाणरदो अपुणब्भावं ण लहदि सादप्पगं भावं लहदि।

अर्थ– अल्पज्ञानियों द्वारा स्थिर की हुई योजना के कारण (जो) व्रत, नियम, अध्ययन, ध्यान और दान में संलग्न (है) (वह) मोक्ष को प्राप्त नहीं करता (है) (किन्तु) (सांसारिक) सुखात्मक अवस्था को प्राप्त करता है।

---

1. संधि नियम 8.1 (प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 8)

57. अविदिदपरमत्थेसु य विसयकसायाधिगेसु पुरिसेसु।
जुट्ठं कदं व दत्तं फलदि कुदेवेसु मणुवेसु।।

अविदिदपरमत्थेसु	[(अविदिद) भूकृ- (परमत्थ) 7/2]	ज्ञानशून्य आत्मस्वरूप में
य	अव्यय	और
विसयकसायाधिगेसु	[(विसयकसाय)+(अधिगेसु)] [(विसय)-(कसाय)- (अधिग) 7/2→2/2 वि]	विषयकषायों की अधिकतावाले
पुरिसेसु	(पुरिस) 7/2→2/2	मनुष्यों को
जुट्ठं	(जुट्ठ) 1/1 वि	की गई सेवा
कदं	(कद) 1/1	लाभ
व	अव्यय	अथवा
दत्तं	(दत्त) भूकृ 1/1 अनि	दिया गया
फलदि	(फल) व 3/1 अक	फलित होती है
कुदेवेसु	(कुदेव) 7/2	कुदेवों में
मणुवेसु	(मणुव) 7/2	कुमनुष्यों में

अन्वय- अविदिदपरमत्थेसु य विसयकसायाधिगेसु पुरिसेसु दत्तं कदं जुट्ठं कुदेवेसु व मणुवेसु फलदि।

अर्थ- आत्मस्वरूप में ज्ञानशून्य और विषयकषायों की अधिकतावाले मनुष्यों को (कई प्रकार से) दिया गया लाभ, तथा (उनकी) की गई सेवा कुदेवों में अथवा कुमनुष्यों में फलित होती है।

58. जदि ते विसयकसाया पाव त्ति परूविदा व सत्थेसु।
किह ते तप्पडिबद्धा पुरिसा णित्थारगा होंति।।

जदि	अव्यय	अगर
ते	(त) 1/2 सवि	वे
विसयकसाया	[(विसय)-(कसाय) 1/2]	विषय-कषायें
पाव त्ति	[(पावा)+(इति)]	
	पावा (पाव) 1/2	पाप
	इति (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक
परूविदा	(परूव) भूकृ 1/2	कही गई
व	अव्यय	पादपूरक
सत्थेसु	(सत्थ) 7/2	शास्त्रों में
किह	अव्यय	कैसे
ते	(त) 1/2 सवि	वे
तप्पडिबद्धा	[(त) सवि-(प्पडिबद्ध) भूकृ 1/2 अनि]	उनसे बँधे हुए
पुरिसा	(पुरिस) 1/2	पुरुष
णित्थारगा	(णित्थारग) 1/2 वि	तारनेवाले
होंति[1]	(हो) व 3/2 अक	होते हैं

अन्वय– जदि ते विसयकसाया सत्थेसु पाव त्ति परूविदा तप्पडिबद्धा व ते पुरिसा किह णित्थारगा होंति।

अर्थ– अगर वे (प्रख्यात) विषय-कषायें शास्त्रों में पाप कही गई हैं (तो) उन (विषय-कषायों) से बँधे हुए वे पुरुष (आवागमनात्मक संसार से) कैसे तारनेवाले होंगे?

---

1. प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

59. उवरदपावो पुरिसो समभावो धम्मिगेसु सव्वेसु।
गुणसमिदिदोवसेवी हवदि स भागी सुमग्गस्स।।

उवरदपावो	(उवरदपाव) 1/1 वि	पाप से रहित
पुरिसो	(पुरिस) 1/1	पुरुष
समभावो	(समभाव) 1/1 वि	एकसा भाव रखनेवाला
धम्मिगेसु	(धम्मिग) 7/2 वि	धर्मवत्सलों में
सव्वेसु	(सव्व) 7/2 सवि	सभी
गुणसमिदिदोवसेवी	[(गुणसमिदिदो)+(अव)+(सेवी)]	
	[(गुण)-(समिदि)[1] 5/1]	गुण-समूह के कारण
	अव[2] (अ) =	निरर्थक प्रयोग
	सेवी (सेवि) 1/1 वि	अभ्यासी
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
स	(त) 1/1 सवि	वह
भागी	(भागि) 1/1 वि	भागीदार/भाजन
सुमग्गस्स	(सुमग्ग) 6/1	श्रेष्ठ मार्ग का

अन्वय– पुरिसो उवरदपावो सव्वेसु धम्मिगेसु समभावो गुणसमिदिदो-वसेवी सुमग्गस्स स भागी हवदि।

अर्थ– (जो) पुरुष पाप से रहित (है), सभी धर्मवत्सलों में एकसा भाव रखनेवाला (है) (तथा) (जो) (धारण किये हुए) गुण-समूह के कारण श्रेष्ठ मार्ग का अभ्यासी (है) वह (मोक्ष का) भागीदार/भाजन है।

---

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'समिदी' का 'समिदि' किया गया है।
2. यहाँ 'अव' अव्यय का निरर्थक प्रयोग हुआ है।

60. असुभोवयोगरहिदा सुद्धुवजुत्ता सुहोवजुत्ता वा।
णित्थारयंति लोगं तेसु पसत्थं लहदि भत्तो।।

असुभोवयोगरहिदा	[(असुभ)+(उवयोगरहिदा)] [(असुभ) वि-(उवयोग)-(रहिद) भूकृ 1/2 अनि]	अशुभ उपयोग से मुक्त
सुद्धुवजुत्ता	[(सुद्ध)+(उवजुत्ता)] [(सुद्ध)-(उवजुत्त) भूकृ 1/2 अनि]	शुद्ध में संलग्न
सुहोवजुत्ता	[(सुद्ध)+(उवजुत्ता)] [(सुह)-(उवजुत्त) भूकृ 1/2 अनि]	शुभ में संलग्न
वा	अव्यय	अथवा
णित्थारयंति	(णित्थारय) व 3/2 सक 'य' विकरण	पार उतारते हैं
लोगं	(लोग) 2/1	मनुष्य-समूह को
तेसु	(त) 7/2 सवि	उनमें
पसत्थं	(पसत्थ) 2/1 वि	सर्वोत्तम
लहदि	(लह) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
भत्तो	(भत्त) भूकृ 1/1 अनि	श्रद्धालु/अनुरक्त

अन्वय- असुभोवयोगरहिदा सुद्धुवजुत्ता वा सुहोवजुत्ता लोगं णित्थारयंति तेसु भत्तो पसत्थं लहदि ।

अर्थ- अशुभ उपयोग से मुक्त (श्रमण) (जो) शुद्ध में संलग्न अथवा शुभ में संलग्न (हैं) (वे) मनुष्य-समूह को (संसार रूपी सागर से) पार उतारते हैं। उन (श्रमणों) में (जो) श्रद्धालु/अनुरक्त (है) (वह) सर्वोत्तम (अवस्था) को प्राप्त करता है।

61. दिट्ठा पगदं वत्थुं अब्भुट्ठाणप्पधाणकिरियाहिं।
वट्टदु तदो गुणादो विसेसिदव्वो त्ति उवदेसो।।

दिट्ठा	(दिट्ठा) संकृ अनि	देखकर
पगदं	(पगद) 2/1 वि	प्राकृतिक
वत्थुं	(वत्थु) 2/1	अवस्था को
अब्भुट्ठाणप्पधाण-	[(अब्भुट्ठाण)-(प्पधाण) वि-	सम्मान के लिए खड़े
किरियाहिं	(किरिया) 3/2]	होना आदि प्रधान
		क्रियाओं से
वट्टदु	(वट्ट) विधि 3/1 सक	आदर करो
तदो	अव्यय	इसलिए
गुणादो	(गुण) 5/2	गुणों के कारण
विसेसिदव्वो त्ति	[(विसेसिदव्वो)+(इति)]	
	विसेसिदव्वो (विसेस)	विशेष किया जाना
	विधिकृ 1/1	चाहिए
	इति (अ) = ऐसा	ऐसा
उवदेसो	(उवदेस) 1/1	उपदेश

अन्वय- उवदेसो गुणादो विसेसिदव्वो त्ति तदो पगदं वत्थुं दिट्ठा अब्भुट्ठाणप्पधाणकिरियाहिं वट्टदु।

अर्थ- ऐसा उपदेश है: (विद्यमान) गुणों के कारण विशेष (व्यवहार) किया जाना चाहिये, इसलिए (श्रमण की) प्राकृतिक अवस्था (यथाजातरूप) को देखकर सम्मान के लिए खड़े होना आदि प्रधान क्रियाओं से (उनका) आदर करो।

62. अब्भुट्ठाणं गहणं उवासणं पोसणं च सक्कारं।
अंजलिकरणं पणमं भणिदमिह गुणाधिगाणं हि।।

अब्भुट्ठाणं	(अब्भुट्ठाण) 1/1	सम्मान में खड़े होना
गहणं	(गहण) 1/1	अपनाना
उवासणं	(उवासण)1/1	सेवा में उपस्थित रहना
पोसणं	(पोसण) 1/1	पोषण
च	अव्यय	तथा
सक्कारं	(सक्कार) 1/1	देखभाल
अंजलिकरणं	(अंजलिकरण) 1/1	हाथ जोड़ना
पणमं[1]	(पणाम) 1/1	साष्टांग प्रणाम
भणिदमिह	[(भणिदं)+(इह)]	
	भणिदं (भण) भूकृ 1/1	कहा गया
	इह (अ) = इस लोक में	इस लोक में
गुणाधिगाणं	[(गुण)+(अधिगाणं)]	
	[(गुण)-(अधिग) 4/2 वि]	गुणों में विशिष्ट (श्रमणों) के लिए
हि	अव्यय	पादपूरक

अन्वय- भणिदमिह गुणाधिगाणं अब्भुट्ठाणं गहणं उवासणं पोसणं सक्कारं अंजलिकरणं हि च पणमं।

अर्थ- इस लोक में (यह) कहा गया है: गुणों में विशिष्ट (श्रमणों) के लिए (उनके आने पर) सम्मान में खड़े होना, (उनको) (श्रद्धापूर्वक) अपनाना, (उनकी) सेवा में उपस्थित रहना, (आहारादि देकर) (उनका) पोषण, (उनकी) देखभाल, (उनके उपस्थित होने पर) हाथ जोड़ना तथा (उनके प्रति) साष्टांग प्रणाम-(यह सब करने योग्य है)।

---

1. कोश में 'पणाम' शब्द पुलिंग दिया गया है, किन्त यहाँ 'पणाम' शब्द का प्रयोग नपुंसकलिंग में किया गया है।

63. अब्भुट्ठेया समणा सुत्तत्थविसारदा उवासेया।
संजमतवणाणड्ढा पणिवदणीया हि समणेहिं।।

अब्भुट्ठेया	(अब्भुट्ठेय) विधिकृ 1/2 अनि	खड़े होकर सम्मान किये जाने योग्य
समणा	(समण) 1/2	श्रमण
सुत्तत्थविसारदा	[(सुत्तत्थ)-(विसारद)1/2 वि]	सूत्रों के अर्थ में प्रवीण
उवासेया	(उवासेय) विधिकृ 1/2 अनि	सेवा किये जाने योग्य
संजमतवणाणड्ढा	[(संजम)-(तव)-(णाणड्ढ) 1/2 वि]	संयम, तप और ज्ञान में सम्पन्न
पणिवदणीया	(पणिवद) विधिकृ 1/2	प्रणाम किये जाने योग्य
हि	अव्यय	निश्चय ही
समणेहिं	(समण) 3/2	श्रमणों द्वारा

अन्वय- समणा अब्भुट्ठेया सुत्तत्थविसारदा उवासेया संजमतव-णाणड्ढा हि समणेहिं पणिवदणीया।

अर्थ- (जो) श्रमण खड़े होकर सम्मान किये जाने योग्य (है), सूत्रों के अर्थ में प्रवीण (है), सेवा किये जाने योग्य (है), संयम, तप और ज्ञान में सम्पन्न (है), (वह) निश्चय ही (अन्य) श्रमणों द्वारा (भी) प्रणाम किये जाने योग्य (होता है)।

64. ण हवदि समणो त्ति मदो संजमतवसुत्तसंपजुत्तो वि।
जदि सद्दहदि ण अत्थे आदपधाणे जिणक्खादे।।

ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
समणो त्ति	[(समणो)+(इति)]	
	समणो (समण) 1/1	श्रमण
	इति (अ) = ऐसा	ऐसा
मदो[1]	(मद) भूकृ 1/1 अनि	माना है
संजमतवसुत्तसंपजुत्तो	[(संजम)-(तव)-(सुत्त)-	संयम, तप और आगम
	(संपजुत्त) 1/1 वि]	(ज्ञान) से युक्त
वि	अव्यय	भी
जदि	अव्यय	यदि
सद्दहदि	(सद्दह) व 3/1 सक	श्रद्धा करता है
ण	अव्यय	नहीं
अत्थे	(अत्थ) 2/2	पदार्थों की
आदपधाणे	[(आद)-(पधाण)	आत्मप्रधान
	2/2 वि]	
जिणक्खादे	[(जिण)+(अक्खादे)]	
	[(जिण)-(अक्खा)	जिनेन्द्रदेव द्वारा
	भूकृ 2/2]	कथित

अन्वय- संजमतवसुत्तसंपजुत्तो वि जदि जिणक्खादे आदपधाणे अत्थे ण सद्दहदि समणो त्ति ण हवदि मदो।

अर्थ- (जो) संयम, तप और आगम (ज्ञान) से युक्त (होकर) भी यदि जिनेन्द्रदेव द्वारा कथित आत्मप्रधान पदार्थों की श्रद्धा नहीं करता है (तो) (वह) श्रमण नहीं है ऐसा (आगम ने) माना है।

---

1. यहाँ भूतकालिक कृदन्त का प्रयोग कर्तृवाच्य में किया गया है

65. अववददि सासणत्थं समणं दिट्ठा पदोसदो जो हि।
किरियासु णाणुमण्णदि हवदि हि सो णट्ठचारित्तो।।

अववददि	(अववद) व 3/1 सक	निंदा/विरोध करता है
सासणत्थं	(सासणत्थ) 2/1 वि	जिनशासन में दृढ़तापूर्वक लगे हुए
समणं	(समण) 2/1	श्रमण को
दिट्ठा	(दिट्ठा) संकृ अनि	देखकर
पदोसदो	(पदोस) (अव्यय) पंचमीअर्थक 'दो' प्रत्यय	द्वेष से/पूर्वक
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
हि	अव्यय	पादपूरक
किरियासु[1]	(किरिया) 7/2→2/2	क्रियाओं को
णाणुमण्णदि	[(ण)+(अणुमण्णदि)]	
	ण (अ) = नहीं	नहीं
	अणुमण्णदि (अणुमण्ण) व 3/1 सक	स्वीकृति देता है
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
हि	अव्यय	निश्चय ही
सो	(त) 1/1 सवि	वह
णट्ठचारित्तो	(णट्ठचारित्त) 1/1 वि	क्षीण चारित्रवाला

अन्वय- जो सासणत्थं समणं दिट्ठा पदोसदो अववददि हि किरियासु णाणुमण्णदि सो हि णट्ठचारित्तो हवदि।

अर्थ- जो (कोई श्रमण) जिनशासन में दृढ़तापूर्वक लगे हुए श्रमण को देखकर द्वेष से/पूर्वक निंदा/विरोध करता है (और) (पूर्वोक्त सम्मान में खड़े होना आदि) क्रियाओं को स्वीकृति नहीं देता है (तो) वह निश्चय ही क्षीण चारित्रवाला होता है।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

66. गुणदोधिगस्स विणयं पडिच्छगो जो वि होमि समणो त्ति।
होज्जं गुणाधरो जदि सो होदि अणंतसंसारी।।

गुणदोधिगस्स	[(गुणदो)+(अधिगस्स)]	
	गुणदो[1](गुण) 5/1	गुणों के कारण
	अधिगस्स[2] (अधिग) 6/1→3/1 वि	विशिष्ट से
विणयं	(विणय) 2/1	आदर
पडिच्छदि	(पडिच्छ) व 3/1 सक	चाहता है
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
वि	अव्यय	भी
होमि	(हो) व 1/1 अक	हूँ
समणो त्ति	[(समणो)+(इति)]	
	समणो (समण) 1/1	श्रमण
	इति (अ) =	पादपूरक
होज्जं[3]	(हो) व 3/1 अक	होता है
गुणाधरो	[(गुण)-(अधर) 1/1 वि]	गुणों को धारण करनेवाला नहीं
जदि	अव्यय	यदि
सो	(त) 1/1 सवि	वह
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
अणंतसंसारी	[(अणंत) वि-(संसारि) 1/1 वि]	अनन्त संसार में परिभ्रमण करनेवाला

अन्वय– जो समणो त्ति गुणाधरो होज्जं वि होमि जदि गुणदोधिगस्स विणयं पडिच्छगो सो अणंतसंसारी होदि।

अर्थ– जो (कोई) श्रमण (श्रमणोचित) गुणों को धारण करनेवाला नहीं होता है (तो) भी (यह कहकर कि) 'मैं श्रमण हूँ' यदि (वह) गुणों के कारण विशिष्ट (श्रमण) से आदर चाहता है (तो) वह अनन्त संसार में परिभ्रमण करनेवाला होता है।

---

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'गुणादो' का 'गुणदो' किया गया है।
2. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)
3. यहाँ अनुस्वार का आगम हुआ है।

• यहाँ पाठ पडिच्छदि होना चाहिये।

67. **अधिगगुणा सामण्णे वट्टंति गुणाधरेहिं किरियासु।**
जदि ते मिच्छुवजुत्ता हवंति पब्भट्ठचारित्ता।।

अधिगगुणा	{[(अधिग) वि-(गुण) 1/2] वि}	विशिष्ट गुणवाले
सामण्णे	(सामण्ण) 7/1	श्रमणता में
वट्टंति	(वट्ट) व 3/2 सक	प्रवृत्ति करते हैं
गुणाधरेहिं	[(गुण)-(अधर) 3/2 वि]	गुणहीनों के साथ
किरियासु	(किरिया) 7/2	चर्या में
जदि	अव्यय	यदि
ते	(त) 1/2 सवि	वे
मिच्छुवजुत्ता	(मिच्छुवजुत्त) 1/2 वि	अश्रद्धा से युक्त
हवंति	(हव) व 3/2 अक	होते हैं
पब्भट्ठचारित्ता	{[(पब्भट्ठ) वि-(चारित्त) 1/2] वि}	हीन चारित्रवाले

अन्वय- जदि सामण्णे अधिगगुणा गुणाधरेहिं किरियासु वट्टंति ते मिच्छुवजुत्ता पब्भट्ठचारित्ता हवंति।

अर्थ- यदि श्रमणता में विशिष्ट गुणवाले (साधु) गुणहीणों के साथ (श्रमण) चर्या में प्रवृत्ति करते हैं (तो) वे (जिनशासन में) अश्रद्धा से युक्त हीन चारित्रवाले होते हैं।

68. णिच्छिदसुत्तत्थपदो समिदकसाओ तवोधिगो चावि।
लोगिगजणसंसग्गं ण चयदि जदि संजदो ण हवदि।।

णिच्छिदसुत्तत्थपदो	[(णिच्छिदसुत्त)+(अत्थपदो)]	
	[(णिच्छिद) भूकृ-(सुत्त)-(अत्थपद) 1/1]	समझ लिया गया है सिद्धान्त का सार/मर्म
समिदकसाओ	[(समिद) भूकृ -(कसाअ) 1/1]	नियंत्रित की गई है कषाय
तवोधिगो	[(तव)+(ओ)+(अधिग)]	
तवोधिगो	[(तव)-(ओ) अ-(अधिग) 1/1 वि]	आश्चर्य है! तप में विशिष्ट
चावि	अव्यय	तो भी
लोगिगजणसंसग्गं	[(लोगिग) वि-(जण)-(संसग्ग) 2/1]	लौकिक मनुष्यों से मेल-जोल
ण	अव्यय	नहीं
चयदि	(चय) व 3/1 सक	छोड़ता है
जदि	अव्यय	यदि
संजदो	(संजद) भूकृ 1/1 अनि	संयमी
ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1अक	होता है

अन्वय– णिच्छिदसुत्तत्थपदो समिदकसाओ तवोधिगो चावि जदि लोगिगजणसंसग्गं ण चयदि संजदो ण हवदि।

अर्थ– (जिसके द्वारा) सिद्धान्त का सार/मर्म समझ लिया गया है (तथा) कषाय नियंत्रित की गई है (और) (जो) तप में विशिष्ट है तो भी आश्चर्य है! यदि (वह) लौकिक मनुष्यों से मेल-जोल नहीं छोड़ता है (तो) (वह) संयमी नहीं होता है/हो सकता है।

69. णिग्गंथो पव्वइदो वट्टदि जदि एहिगेहि कम्मेहिं।
सो लोगिगो त्ति भणिदो संजमतवसंजुदो चावि।।

णिग्गंथो	(णिग्गंथ) 1/1	श्रमण
पव्वइदो	(पव्वइद) 1/1 वि	दीक्षा ग्रहण किया हुआ
वट्टदि	(वट्ट) व 3/1 सक	प्रवृत्ति करता है
जदि	अव्यय	यदि
एहिगेहि	(एहिग) 3/2→7/2 वि	इस लोक संबंधी/ सांसारिक
कम्मेहिं	(कम्म) 3/2→7/2	क्रियाओं में
सो	(त) 1/1 सवि	वह
लोगिगो त्ति	[(लोगिगो)+(इति)]	
	लोगिगो (लोगिग) 1/1 वि	लौकिक
	इति (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक
भणिदो	(भण) भूकृ 1/1	कहा गया
संजमतवसंजुदो	[(संजम)-(तव)-	आत्मनियंत्रण और तप
	(संजुद) भूकृ 1/1 अनि]	से युक्त
चावि	अव्यय	यद्यपि

अन्वय- पव्वइदो णिग्गंथो जदि एहिगेहि कम्मेहिं वट्टदि सो लोगिगो त्ति भणिदो चावि संजमतवसंजुदो।

अर्थ- दीक्षा ग्रहण किया हुआ श्रमण यदि इस लोक संबंधी/सांसारिक *क्रियाओं में प्रवृत्ति करता है* (तो) वह लौकिक कहा गया है यद्यपि (वह) आत्मनियंत्रण और तप से युक्त (होता है)।

70. तम्हा समं गुणादो समणो समणं गुणेहिं वा अहियं।
अधिवसदु तम्हि णिच्चं इच्छदि जदि दुक्खपरिमोक्खं।।

तम्हा	अव्यय	इसलिए
समं	अव्यय	एकसमान
गुणादो[1]	(गुण) 5/2	गुणों से
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
समणं[2]	(समण) 2/1 →1/1	श्रमण
गुणेहिं[3]	(गुण) 3/2→5/2	गुणों से
वा	अव्यय	अथवा
अहियं	अव्यय	ज्यादा
अधिवसदु	(अधिवस) विधि 3/1 अक	रहे
तम्हि	(त) 7/1 सवि	वहाँ पर
णिच्चं	अव्यय	सदैव
इच्छदि	(इच्छ) व 3/1 सक	चाहता है
जदि	अव्यय	यदि
दुक्खपरिमोक्खं	[(दुक्ख)-(परिमोक्ख) 2/1]	दुखों से मुक्ति

अन्वय- तम्हा जदि समणो दुक्खपरिमोक्खं इच्छदि णिच्चं गुणादो समं वा गुणेहिं अहियं समणं तम्हि अधिवसदु।

अर्थ- इसलिए यदि श्रमण दुखों से मुक्ति चाहता है (तो) (वह) सदैव (अपने) गुणों से एकसमान अथवा (अपने) गुणों से ज्यादा (गुणवाला) श्रमण (जहाँ रहता है) वहाँ पर (ही) रहे।

---

1. जिससे किसी वस्तु या व्यक्ति की तुलना की जाए, उसमें पंचमी होती है। (प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 44)
2. प्रथमा विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है। (प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 32)
3. पंचमी विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी तृतीया विभक्ति होती है। (प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 44)

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

71. जे अजधागहिदत्था एदे तच्च त्ति णिच्छिदा समये।
अच्चंतफलसमिद्धं भमंति ते तो परं कालं।।

जे	(ज) 1/2 सवि	जो
अजधागहिदत्था	[(अजधागहिद)+(अत्था)]	
	[(अजधा) अ-(गहिद) संकृ-(अत्थ) 2/2]	अनुपयुक्त रूप से पदार्थों को स्वीकार करके
एदे	(एत) 1/2 सवि	ये
तच्च त्ति	[(तच्चा)+(इति)]	
	तच्चा (तच्च) 1/2	पदार्थ
	इति (अ) = इस प्रकार ही	इस प्रकार ही
णिच्छिदा	(णिच्छिद) भूकृ 1/2 अनि	निर्धारित किये गये
समये	(समय) 7/1	जिन-सिद्धान्त में
अच्चंतफलसमिद्धं[1]	[(अच्चंत) वि-(फल)-(समिद्ध)भूकृ 2/1→7/2 अनि]	अत्यन्त (दुखरूप)फल से भरे हुए (संसार) में
भमंति	(भम) व 3/2 सक	परिभ्रमण करते हैं
ते	(त) 1/2 सवि	वे
तो	अव्यय	तो
परं	(पर) 2/1 वि	अनन्त
कालं[2]	(काल) 2/1	काल तक

अन्वय–जे अजधागहिदत्था एदे तच्च त्ति समये णिच्छिदा तो ते अच्चंतफलसमिद्धं परं कालं भमंति।

अर्थ– जो पदार्थों को अनुपयुक्त रूप से स्वीकार करके (कहता है) (कि) ये पदार्थ जिन-सिद्धान्त में इस प्रकार ही निर्धारित किये गये (हैं) तो वे अत्यन्त(दुखरूप) फल से भरे हुए(संसार) में अनन्त काल तक परिभ्रमण करते हैं।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)
2. यहाँ 'परं' द्वितीया विभक्ति में रखा गया है तथा 'कालं' भी द्वितीया विभक्ति में है। (यह प्रयोग उस समय होता है जब निरन्तरता हो समाप्ति नहीं)। (प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 33)

72. अजधाचारविजुत्तो जधत्थपदणिच्छिदो पसंतप्पा।
अफले चिरं ण जीवदि इह सो संपुण्णसामण्णो।।

अजधाचारविजुत्तो	[(अजधाचार) वि-(विजुत्त) भूकृ 1/1 अनि]	अशुद्ध आचार से रहित
जधत्थपदणिच्छिदो	[(जधत्थ) वि-(पद)-(णिच्छिद) भूकृ 1/1 अनि]	वास्तविक पदार्थ का निश्चय कर लिया गया
पसंतप्पा	[(पसंत)+(अप्पा)] [(पसंत) वि-(अप्प) 1/1]	शान्त आत्मा
अफले	(अफल) 7/1 वि	निरर्थक में
चिरं	अव्यय	दीर्घकाल तक
ण	अव्यय	नहीं
जीवदि	(जीव) व 3/1 अक	जीता/ठहरता है
इह	अव्यय	इस संसार में
सो	(त) 1/1 सवि	वह
संपुण्णसामण्णो	[(संपुण्ण) भूकृ अनि-(सामण्ण) 1/1]	पूरी कर ली गयी है श्रमणता

अन्वय- अजधाचारविजुत्तो जधत्थपदणिच्छिदो पसंतप्पा संपुण्ण-सामण्णो सो इह अफले चिरं ण जीवदि ।

अर्थ- (जो) अशुद्ध आचार से रहित है (जिसके द्वारा) वास्तविक पदार्थ का निश्चय कर लिया गया (है) (तथा) (जिसकी) आत्मा शान्त (व्याकुलता-रहित) (है) (तथा) (जिसके द्वारा) श्रमणता (श्रमण-साधना) पूरी कर ली गई (है) वह इस निरर्थक संसार में दीर्घकाल तक नहीं जीता/ठहरता है (ठहरेगा)।

---

1. कोश में 'सामण्ण' शब्द नपुंसकलिंग दिया गया है, किन्त यहाँ 'सामण्ण' शब्द का प्रयोग पुलिंग में किया गया है।

73. सम्मं विदिदपदत्था चत्ता उवहिं बहित्थमज्झत्थं।
विसयेसु णावसत्ता जे ते शुद्ध त्ति णिद्दिट्ठा।।

सम्मं	अव्यय	सम्यक् प्रकार से
विदिदपदत्था	[(विदिद) भूकृ-	जान लिये गये हैं
	(पदत्थ) 1/2]	पदार्थ
चत्ता[1]	(चत्त) भूकृ 1/2 अनि	छोड़ दिया
उवहिं	(उवहि) 2/1	परिग्रह को
बहित्थमज्झत्थं	[(बहित्थं)+(अज्झत्थं)]	
	बहित्थं (बहित्थ) 2/1 वि	बाहरस्थित (बहिरंग)
	अज्झत्थं (अज्झत्थ) 2/1 वि	मन में स्थित (अंतरंग)
विसयेसु	(विसय) 7/2	(इन्द्रिय) विषयों में
णावसत्ता	[(ण)+(अवसत्ता)]	
	ण (अ) = नहीं है	नहीं है
	अवसत्ता (अवसत्त) 1/2 वि	लीन/आसक्त
जे	(ज) 1/2 सवि	जो
ते	(त) 1/2 सवि	वे
शुद्ध त्ति	[(शुद्धा)+(इति)]	
	शुद्धा (शुद्ध) 1/2 वि	शुद्धोपयोगी
	इति (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक
णिद्दिट्ठा	(णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/2 अनि	कहे गये

अन्वय- विदिदपदत्था सम्मं बहित्थमज्झत्थं उवहिं चत्ता जे विसयेसु णावसत्ता ते शुद्ध त्ति णिद्दिट्ठा।

अर्थ- (जिनके द्वारा) पदार्थ सम्यक् प्रकार से जान लिये गये (हैं), (जिन्होंने) बाहरस्थित (बहिरंग) (तथा) मन में स्थित (अंतरंग) परिग्रह को छोड़ दिया है जो (इन्द्रिय) विषयों में लीन/आसक्त नहीं है वे शुद्धोपयोगी कहे गये (हैं)।

---

1. यहाँ भूतकालिक कृदन्त का प्रयोग कर्तृवाच्य में किया गया है।

74. सुद्धस्स य सामण्णं भणियं सुद्धस्स दंसणं णाणं।
सुद्धस्स य णिव्वाणं सो च्चिय सिद्धो णमो तस्स।।

सुद्धस्स	(सुद्ध) 4/1 वि	शुद्धोपयोगी के लिए
य	अव्यय	और
सामण्णं	(सामण्ण) 1/1	श्रमणता
भणियं	(भण) भूकृ 1/1	कही गई
सुद्धस्स	(सुद्ध) 4/1	शुद्धोपयोगी के लिए
दंसणं	(दंसण) 1/1	दर्शन
णाणं	(ज्ञान) 1/1	ज्ञान
सुद्धस्स	(सुद्ध) 4/1 वि	शुद्धोपयोगी के लिए
य	अव्यय	तथा
णिव्वाणं	(णिव्वाण) 1/1	मोक्ष
सो	(त) 1/1 सवि	वह
च्चिय	अव्यय	ही
सिद्धो	(सिद्ध) 1/1	सिद्ध
णमो	अव्यय	नमस्कार
तस्स[1]	(त) 4/1 सवि	उनके लिए

अन्वय– सुद्धस्स सामण्णं भणियं य सुद्धस्स णाणं दंसणं य सुद्धस्स णिव्वाणं सो च्चिय सिद्धो तस्स णमो।

अर्थ– शुद्धोपयोगी के लिए (पूर्ण) श्रमणता कही गई (है) और शुद्धोपयोगी के लिए ज्ञान -दर्शन (कहा गया है) तथा शुद्धोपयोगी के लिए मोक्ष (भी) (कहा गया है)। वह ही सिद्ध (है) (अतः) उनको नमस्कार!

---

1. 'णमो' के योग में चतुर्थी होती है।

75. बुज्झदि सासणमेयं सागारणगारचरियया जुत्तो।
जो सो पवयणसारं लहुणा कालेण पप्पोदि।।

बुज्झदि	(बुज्झ) व 3/1 सक	समझता है
सासणमेयं	[(सासणं)+(एयं)]	
	सासणं[1] (सासण) 2/1→7/1	जिन-शासन में
	एयं (एय) 2/1 सवि	इसको
सागारणगारचरियया[1]	[(सागार)+(अणगार)+(चरियया)]	
	[(सागार)वि-(अणगार)वि-	श्रावक और श्रमण की
	(चरियया) 2/2→7/2]	चारित्रताओं में
जुत्तो	(जुत्त) भूकृ 1/1 अनि	स्थिर
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
सो	(त) 1/1 सवि	वह
पवयणसारं	(पवयणसार) 2/1	प्रवचनसार को
लहुणा[1]	(लहु) 3/1→7/1 वि	अल्प
कालेण[1]	(काल) 3/1→7/1	काल में
पप्पोदि	(पप्पोदि) व 3/1 सक अनि	प्राप्त करता है

अन्वय- जो सागारणगारचरियया जुत्तो सासणमेयं बुज्झदि सो पवयणसारं लहुणा कालेण पप्पोदि।

अर्थ- जो श्रावक और श्रमण की चारित्रताओं में (व्रत आचरण में) स्थिर (है) (जो) जिन-शासन में इस (बात/महत्त्व) को समझता है वह **प्रवचनसार** को अल्प काल में प्राप्त करता है।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया/तृतीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

मूल पाठ

1. एवं पणमिय सिद्धे जिणवरवसहे पुणो पुणो समणे।
पडिवज्जदु सामण्णं जदि इच्छदि दुक्खपरिमोक्खं।।
2. आपिच्छ बंधुवग्गं विमोचिदो गुरुकलत्तपुत्तेहिं।
आसिज्ज णाणदंसणचरित्ततववीरियायारं।।

3. समणं गणिं गुणड्ढं कुलरूववयोविसिट्ठमिट्ठदरं।
समणेहि तं पि पणदो पडिच्छ मं चेदि अणुगहिदो।।

4. णाहं होमि परेसिं ण मे परे णत्थि मज्झमिह किंचि।
इदि णिच्छिदो जिदिंदो जादो जधजादरूवधरो।।

5. जधजादरूवजादं उप्पाडिदकेसमंसुगं सुद्धं।
रहिदं हिंसादीदो अप्पडिकम्मं हवदि लिंगं।।
6. मुच्छारंभविमुक्कं जुत्तं उवजोगजोगसुद्धीहिं।
लिंगं ण परावेक्खं अपुणब्भवकारणं जेण्हं।।

7. आदाय तं पि लिंगं गुरुणा परमेणं तं णमंसित्ता।
सोच्चा सवदं किरियं उवट्ठिदो होदि सो समणो।।

8. वदसमिदिंदियरोधो लोचावस्सयमचेलमण्हाणं।
खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेगभत्तं च।।

9. एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
तेसु पमत्तो समणो छेदोवट्ठावगो होदि।।

10. लिंगग्गहणे तेसिं गुरु त्ति पव्वज्जदायगो होदि।
छेदेसूवट्ठवगा सेसा णिज्जावगा समणा।।

11. पयदम्हि समारद्धे छेदो समणस्स कायचेट्ठम्हि।
जायदि जदि तस्स पुणो आलोयणपुव्विया किरिया।।
12. छेदपउत्तो समणो समणं ववहारिणं जिणमदम्हि।
आसेज्जालोचित्ता उवदिट्ठं तेण कायव्वं।।

13. अधिवासे व विवासे छेदविहूणो भवीय सामण्णे।
समणो विहरदु णिच्चं परिहरमाणो णिबंधाणि।।

14. चरदि णिबद्धो णिच्चं समणो णाणम्मि दंसणमुहम्मि।
पयदो मूलगुणेसु य जो सो पडिपुण्णसामण्णो।।

15. भत्ते वा खमणे वा आवसधे वा पुणो विहारे वा।
उवधिम्हि वा णिबद्धं णेच्छदि समणम्हि विकधम्हि।।

16. अपयत्ता वा चरिया सयणासणठाणचंकमादीसु।
समणस्स सव्वकाले हिंसा सा संतत्तिय त्ति मदा।।

17. मरदु व जियदु व जीवो अयदाचारस्स णिच्छिदा हिंसा।
पयदस्स णत्थि बंधो हिंसामेत्तेण समिदस्स।।

18. अयदाचारो समणो छस्सु वि कायेसु वधकरो त्ति मदो।
चरदि जदं जदि णिच्चं कमलं व जले णिरुवलेवो।।

19. हवदि व ण हवदि बंधो मदम्हि जीवेऽध कायचेट्ठम्हि।
बंधो धुवमुवधीदो इदि समणा छड्डिया सव्वं।।

20. ण हि णिरवेक्खो चागो ण हवदि भिक्खुस्स आसयविसुद्धी।
अविसुद्धस्स य चित्ते कहं णु कम्मक्खओ विहिओ।।

21. किध तम्हि णत्थि मुच्छा आरंभो वा असंजमो तस्स।
तध परदव्वम्मि रदो कधमप्पाणं पसाधयदि।।

22. छेदो जेण ण विज्जदि गहणविसग्गेसु सेवमाणस्स।
समणो तेणिह वट्टदु कालं खेत्तं वियाणित्ता।।

23. अप्पडिकुट्ठं उवधिं अपत्थणिज्जं असंजदजणेहिं।
मुच्छादिजणणरहिदं गेण्हदु समणो जदि वि अप्पं।।

24. किं किंचण त्ति तक्कं अपुणब्भवकामिणोध देहे वि।
संग त्ति जिणवरिंदा णिप्पडिकम्मत्तमुद्दिट्ठा।।

25. उवयरणं जिणमग्गे लिंगं जहजादरूवमिदि भणिदं।
गुरुवयणं पि य विणओ सुत्तज्झयणं च णिद्दिट्ठं।।

26. इहलोगणिरावेक्खो अप्पडिबद्धो परम्मि लोयम्हि।
जुत्ताहारविहारो रहिदकसाओ हवे समणो।।

27. जस्स अणेसणमप्पा तं पि तवो तप्पडिच्छगा समणा।
अण्णं भिक्खमणेसणमध ते समणा अणाहारा।।

28. केवलदेहो समणो देहे वि ममत्तरहिदपरिकम्मा।
आजुत्तो तं तवसा अणिगूहिय अप्पणो सत्तिं।।

29. एक्कं खलु तं भत्तं अप्पडिपुण्णोदरं जहालद्धं।
चरणं भिक्खेण दिवा ण रसावेक्खं ण मधुमंसं।।

30. बालो वा बुड्ढो वा समभिहदो वा पुणो गिलाणो वा।
चरियं चरदु सजोग्गं मूलच्छेदो जधा ण हवदि।।

31. आहारे व विहारे देसं कालं समं खमं उवधिं।
जाणित्ता ते समणो वट्टदि जदि अप्पलेवी सो।।

32. एयग्गगदो समणो एयग्गं णिच्छिदस्स अत्थेसु।
णिच्छित्ती आगमदो आगमचेट्ठा तदो जेट्ठा।।

33. आगमहीणो समणो णेवप्पाणं परं वियाणादि।
अविजाणंतो अट्ठे खवेदि कम्माणि किध भिक्खू।।

34. आगमचक्खू साहू इंदियचक्खूणि सव्वभूदाणि।
देवा य ओहिचक्खू सिद्धा पुण सव्वदो चक्खू।।

35. सव्वे आगमसिद्धा अत्था गुणपज्जएहिं चित्तेहिं।
जाणंति आगमेण हि पेच्छित्ता ते वि ते समणा।।

36. आगमपुव्वा दिट्ठी ण भवदि जस्सेह संजमो तस्स।
णत्थीदि भणदि सुत्तं असंजदो होदि किध समणो।।

37. ण हि आगमेण सिज्झदि सद्दहणं जदि वि णत्थि अत्थेसु।
सद्दहमाणो अत्थे असंजदो वा ण णिव्वादि।।

38. जं अण्णाणी कम्मं खवेदि भवसयसहस्सकोडीहिं।
तं णाणी तिहिं गुत्तो खवेदि उस्सासमेत्तेण।।

39. परमाणुपमाणं वा मुच्छा देहादिएसु जस्स पुणो।
विज्जदि जदि सो सिद्धिं ण लहदि सव्वागमधरो वि।।

40. पंचसमिदो तिगुत्तो पंचेंदियसंवुडो जिदकसाओ।
दंसणणाणसमग्गो समणो सो संजदो भणिदो।।

41. समसत्तुबंधुवग्गो समसुहदुक्खो पसंसणिंदसमो।
समलोट्ठुकंचणो पुण जीविदमरणे समो समणो।।

42. दंसणणाणचरित्तेसु तीसु जुगवं समुट्ठिदो जो दु।
एयग्गगदो त्ति मदो सामण्णं तस्स पडिपुण्णं।।

43. मुज्झदि वा रज्जदि वा दुस्सदि वा दव्वमण्णमासेज्ज।
जदि समणो अण्णाणी बज्झदि कम्मेहिं विविहेहिं।।

44. अट्ठेसु जो ण मुज्झदि ण हि रज्जदि णेव दोसमुवयादि।
समणो जदि सो णियदं खवेदि कम्माणि विविहाणि।।

45. समणा सुद्धुवजुत्ता सुहोवजुत्ता य होंति समयम्हि।
तेसु वि सुद्धुवजुत्ता अणासवा सासवा सेसा।।

46. अरहंतादिसु भत्ती वच्छलदा पवयणाभिजुत्तेसु।
विज्जदि जदि सामण्णे सा सुहजुत्ता भवे चरिया।।

47. वंदणणमंसणेहिं अब्भुट्ठाणाणुगमणपडिवत्ती।
समणेसु समावणओ ण णिंदिदा रायचरियम्हि।।

48. दंसणणाणुवदेसो सिस्सग्गहणं च पोसणं तेसिं।
चरिया हि सरागाणं जिणिंदपूजोवदेसो य।।

49. उवकुणदि जो वि णिच्चं चादुव्वण्णस्स समणसंघस्स।
कायविराधणरहिदं सो वि सरागप्पधाणो से।।

50. जदि कुणदि कायखेदं वेज्जावच्चत्थमुज्जदो समणो।
ण हवदि हवदि अगारी धम्मो सो सावयाणं से।।

51. जोण्हाणं णिरवेक्खं सागारणगारचरियजुत्ताणं।
अणुकंपयोवयारं कुव्वदु लेवो जदि वि अप्पो।।

52. रोगेण वा छुधाए तण्हाए वा समेण वा रूढं।
दिट्ठा समणं साहू पडिवज्जदु आदसत्तीए।।

53. वेज्जावच्चणिमित्तं गिलाणगुरुबालवुड्ढसमणाणं।
लोगिगजणसंभासा ण णिंदिदा वा सुहोवजुदा।।

54. एसा पसत्थभूदा समणाणं वा पुणो घरत्थाणं।
चरिया परेत्ति भणिदा ताएव परं लहदि सोक्खं।।

55. रागो पसत्थभूदो वत्थुविसेसेण फलदि विवरीदं।
णाणाभूमिगदाणिह बीजाणिव सस्सकालम्हि।।

56. छदुमत्थविहिदवत्थुसु वदणियमज्झयणझाणदाणरदो।
ण लहदि अपुणब्भावं भावं सादप्पगं लहदि।।

57. अविदिदपरमत्थेसु य विसयकसायाधिगेसु पुरिसेसु।
जुट्ठं कदं व दत्तं फलदि कुदेवेसु मणुवेसु।।

58. जदि ते विसयकसाया पाव त्ति परूविदा व सत्थेसु।
किह ते तप्पडिबद्धा पुरिसा णित्थारगा होंति।।

59. उवरदपावो पुरिसो समभावो धम्मिगेसु सव्वेसु।
गुणसमिदिदोवसेवी हवदि स भागी सुमग्गस्स।।

60. असुभोवयोगरहिदा सुद्धुवजुत्ता सुहोवजुत्ता वा।
णित्थारयंति लोगं तेसु पसत्थं लहदि भत्तो।।

61. दिट्ठा पगदं वत्थुं अब्भुट्ठाणप्पधाणकिरियाहिं।
वट्टदु तदो गुणादो विसेसिदव्वो त्ति उवदेसो।।

62. अब्भुट्ठाणं गहणं उवासणं पोसणं च सक्कारं।
अंजलिकरणं पणमं भणिदमिह गुणाधिगाणं हि।।

63. अब्भुट्ठेया समणा सुत्तत्थविसारदा उवासेया।
संजमतवणाणड्ढा पणिवदणीया हि समणेहिं।।

64. ण हवदि समणो त्ति मदो संजमतवसुत्तसंपजुत्तो वि।
जदि सद्दहदि ण अत्थे आदपधाणे जिणक्खादे।।

65. अववददि सासणत्थं समणं दिट्ठा पदोसदो जो हि।
किरियासु णाणुमण्णदि हवदि हि सो णट्ठचारित्तो।।

66. गुणदोधिगस्स विणयं पडिच्छगो जो वि होमि समणो त्ति।
होज्जं गुणाधरो जदि सो होदि अणंतसंसारी।।

67. अधिगगुणा सामण्णे वट्टंति गुणाधरेहिं किरियासु।
जदि ते मिच्छुवजुत्ता हवंति पब्भट्ठचारित्ता।।

68. णिच्छिदसुत्तत्थपदो समिदकसाओ तवोधिगो चावि।
लोगिगजणसंसग्गं ण चयदि जदि संजदो ण हवदि।।

69. णिग्गंथो पव्वइदो वट्टदि जदि एहिगेहि कम्मेहिं।
सो लोगिगो त्ति भणिदो संजमतवसंजुदो चावि।।

70. तम्हा समं गुणादो समणो समणं गुणेहिं वा अहियं।
अधिवसदु तम्हि णिच्चं इच्छदि जदि दुक्खपरिमोक्खं।।

71. जे अजधागहिदत्था एदे तच्च त्ति णिच्छिदा समये।
अच्चंतफलसमिद्धं भमंति ते तो परं कालं।।

72. अजधाचारविजुत्तो जधत्थपदणिच्छिदो पसंतप्पा।
अफले चिरं ण जीवदि इह सो संपुण्णसामण्णो।।

73. सम्मं विदिदपदत्था चत्ता उवहिं बहित्थमज्झत्थं।
विसयेसु णावसत्ता जे ते शुद्ध त्ति णिद्दिट्ठा।।

74. सुद्धस्स य सामण्णं भणियं सुद्धस्स दंसणं णाणं।
सुद्धस्स य णिव्वाणं सो च्चिय सिद्धो णमो तस्स।।

75. बुज्झदि सासणमेयं सागारणगारचरियया जुत्तो।
जो सो पवयणसारं लहुणा कालेण पप्पोदि।।

परिशिष्ट-1

संज्ञा-कोश

संज्ञा शब्द	अर्थ	लिंग	गा.सं.
अंजलिकरण	हाथ जोड़ना	अकारान्त नपुं.	62
अचेल	दिगम्बर अवस्था	अकारान्त नपुं.	8
अज्झयण	अध्ययन	अकारान्त पु., नपुं.	25, 56
अट्ठ	पदार्थ	अकारान्त पु., नपुं.	33, 44
अणुगमण	पीछे-पीछे चलना	अकारान्त नपुं.	47
अण्ण	अन्न	अकारान्त पु.	27
अण्हाण	स्नान नहीं करना	अकारान्त नपुं.	8
अत्थ	पदार्थ	अकारान्त पु., नपुं.	32,35,37,64,71
अत्थपद	सिद्धान्त का सार/मर्म	अकारान्त पु.	68
अदंतवण	दाँतौन नहीं करना	अकारान्त नपुं.	8
अधिवास	(गुरु के) पास	अकारान्त पु.	13
अपुणब्भव	मोक्ष	अकारान्त पु.	6, 24
अपुणब्भाव	मोक्ष	अकारान्त पु.	56
अप्प	आत्मा	अकारान्त पु.	27, 72
	स्वयं		28
अप्पाण	आत्मा	अकारान्त पु.	21, 33
अब्भुट्ठाण	सम्मान के लिए खड़े होना	अकारान्त नपुं.	47, 61
	सम्मान में खड़े होना		62

अरहंत	अरहंत	अकारान्त पु.	46
अवणअ	निराकरण करना	अकारान्त पु.	47
अवेक्खा	चाह	आकारान्त स्त्री.	29
आगम	आगम	अकारान्त पु.	32, 33, 34, 35, 36, 37, 39
आद	आत्मा	अकारान्त पु.	64
आदि	वगैरह	**इकारान्त** पु.	5
	आदि		16, 23 , 39, 46
आयार	आचार	अकारान्त पु.	2
आरंभ	सांसारिक क्रिया	अकारान्त पु.	6
	जीव हिंसा		21
आलोयणा	आलोचना	आकारान्त स्त्री.	11
आवसध	आवास	अकारान्त पु.	15
आवस्सय	आवश्यक	अकारान्त नपुं.	8
आसण	बैठना	अकारान्त नपुं.	16
आसय	चित्त	अकारान्त पु.	20
आहार	आहार	अकारान्त पु.	26
	आहार-चर्या	अकारान्त पु.	31
इंदिय	इन्द्रिय	अकारान्त पु., नपुं.	8, 34, 40
उदर	पेट	अकारान्त नपुं.	29
उवजोग	भाव	अकारान्त पु.	6
उवदेस	जन-शिक्षण	अकारान्त पु.	48
	उपदेश		48, 61

उवधि	परिग्रह	**इकारान्त** पु., स्त्री.	15, 19, 23
	शरीरावस्था		31
उवयरण	उपाय/साधन	अकारान्त नपुं.	25
उवयार	उपकार	अकारान्त पु.	51
उवयोग	उपयोग	अकारान्त पु.	60
उवासण	सेवा में उपस्थित रहना	अकारान्त नपुं.	62
उवहि	परिग्रह	**इकारान्त** पु., स्त्री.	73
उस्सास	उच्छवास	अकारान्त पु.	38
एगभत्त	एक बार भोजन करना	अकारान्त नपुं.	8
एसणा	इच्छा	आकारान्त स्त्री.	27
ओहि	अवधि	**इकारान्त** पु., स्त्री.	34
कंचण	सोना	अकारान्त नपुं.	41
कद	लाभ	अकारान्त नपुं.	57
कमल	कमल	अकारान्त नपुं.	18
कम्म	कर्म	अकारान्त पु., नपुं.	20,33,38,43,44
	क्रिया		69
कलत्त	पत्नि	अकारान्त नपुं.	2
कसाअ	कषाय	अकारान्त पु.	26,40,57,58,68
काय	शरीर	अकारान्त पु.	11, 19, 49
	काय (शरीर)		50
कारण	कारण	अकारान्त नपुं.	6

काल	काल	अकारान्त पु.	16, 22, 31, 71,75
	समय		55
किरिया	क्रिया	आकारान्त स्त्री.	7, 11, 61, 65
	चर्या	आकारान्त स्त्री.	67
कुदेव	कुदेव	अकारान्त पु.	57
कुल	कुल	अकारान्त पु., नपुं.	3
केस	बाल	अकारान्त पु.	5
कोडि	करोड़	**इकारान्त** स्त्री.	38
क्खअ	अंत	अकारान्त पु.	20
खमण	उपवास	अकारान्त नपुं.	15
खिदि	भूमि	**इकारान्त** स्त्री.	8
खेत्त	क्षेत्र	अकारान्त पु., नपुं.	22
खेद	दुख	अकारान्त पु.	50
गणि	आचार्य	**इकारान्त** पु.	3
गहण	स्वीकार करना	अकारान्त नपुं.	22
	अपनाना	अकारान्त नपुं.	62
गुण	गुण	अकारान्त पु., नपुं.	35, 59, 61, 62, 66, 67, 70
गुरु	माता-पिता	***उकारान्त*** पु.	2
	गुरु		7, 10, 25
	पूज्य		53
ग्गहण	ग्रहण	अकारान्त नपुं.	10, 48
घरत्थ	गृहस्थ	अकारान्त पु.	54

चंकम	परिभ्रमण	अकारान्त नपुं.	16
चक्खु	ज्ञान	*उकारान्त* पु., नपुं.	34
चरित्त	चारित्र	अकारान्त नपुं.	2
	सम्यक्चारित्र		42
चरिय	आचरण	अकारान्त नपुं.	30
	चारित्र अवस्था		47
चरियया	चारित्रता	आकारान्त स्त्री.	75
चरिया	चर्या	आकारान्त स्त्री.	16,46,48,51,54
चाग	त्याग	अकारान्त पु.	20
चारित्त	चारित्र	अकारान्त नपुं.	67
चित्त	चित्त	अकारान्त नपुं.	20
चेट्ठा	क्रिया	आकारान्त स्त्री.	11, 19
	प्रयास	आकारान्त स्त्री.	32
छुधा	भूख	आकारान्त स्त्री.	52
छेद	संयम-भंग	अकारान्त पु.	9, 10, 11, 12, 13, 22
जण	मनुष्य	अकारान्त पु.	23, 68
	व्यक्ति		53
जणण	उत्पत्ति	अकारान्त नपुं.	23
जल	जल	अकारान्त नपुं.	18
जिण	जिनेन्द्र देव	अकारान्त पु.	64
जिणिंद	जिनेन्द्र देव	अकारान्त पु.	48
जिणमद	जिनसिद्धान्त	अकारान्त नपुं.	12

जिणमग्ग	जिनमार्ग	अकारान्त पु.	25
जिणवर	जिनवर	अकारान्त पु.	1, 9
जिणवरिंद	सर्वज्ञ देव	अकारान्त पु.	24
जीव	जीव	अकारान्त पु., नपुं.	17, 19
जीविद	जीवन	अकारान्त नपुं.	41
जोग	क्रिया	अकारान्त पु.	6
झाण	ध्यान	अकारान्त पु., नपुं.	56
ठाण	खड़े होना	अकारान्त पु., नपुं.	16
ठिदि	खड़े होना	**इकारान्त** स्त्री.	8
णमंसण	नमन	अकारान्त नपुं.	47
णाण	ज्ञान	अकारान्त नपुं.	2, 14, 40, 74
	सम्यग्ज्ञान		42, 48
णिग्गंथ	श्रमण	अकारान्त पु.	69
णिंदा	निंदा	आकारान्त स्त्री.	41
णिच्छित्ति	निश्चितता	**इकारान्त** स्त्री.	32
णिप्पडिकम्मत्त	परिष्कार-रहितता	अकारान्त नपुं.	24
णिबंध	संबंध/संयोग	अकारान्त पु., नपुं.	13
णिमित्त	निमित्त	अकारान्त नपुं.	53
णियम	नियम	अकारान्त पु.	56
णिव्वाण	मोक्ष	अकारान्त नपुं.	74
तक्क	विचार	अकारान्त पु.	24
तच्च	पदार्थ	अकारान्त नपुं.	71
तण्हा	प्यास	आकारान्त स्त्री.	52

तव	तप	अकारान्त पु., नपुं.	2, 27, 63, 64, 68, 69
दंसण	दर्शन	अकारान्त पु., नपुं.	2, 40, 74
	आत्मस्मरण		14
	सम्यग्दर्शन		42, 48
दव्व	द्रव्य	अकारान्त पु., नपुं.	21, 43
दाण	दान	अकारान्त पु., नपुं.	56
दिट्ठि	सम्यग्दर्शन	**इकारान्त** स्त्री.	36
दुक्ख	दुख	अकारान्त पु., नपुं.	1, 41, 70
देव	देव	अकारान्त पु., नपुं.	34
देस	क्षेत्र	अकारान्त पु.	31
देह	देह	अकारान्त पु., नपुं.	24, 28, 39
दोस	द्वेष	अकारान्त पु.	44
धम्म	जीवन-पद्धति	अकारान्त पु., नपुं.	50
पज्जअ	पर्याय	अकारान्त पु.	35
पडिवत्ति	प्रवृत्ति	**इकारान्त** स्त्री.	47
पणाम	साष्टांग प्रणाम	अकारान्त पु.	62
पद	पदार्थ	अकारान्त नपुं.	72
पदत्थ	पदार्थ	अकारान्त पु.	73
पमाण	परिमाण	अकारान्त नपुं.	39
परमाणु	परमाणु	***उकारान्त*** पु.	39
परमत्थ	आत्मस्वरूप	अकारान्त पु.	57
परिकम्म	क्रिया	अकारान्त पु., नपुं.	28

परिमोक्ख	मुक्ति	अकारान्त पु.	1, 70
पवयण	आगम-ज्ञान	अकारान्त नपुं.	46
पवयणसार	प्रवचनसार	अकारान्त पु., नपुं.	75
पव्वज्जा	प्रव्रज्या	आकारान्त स्त्री.	10
पसंसा	प्रशंसा	आकारान्त स्त्री.	41
पाव	पाप	अकारान्त पु., नपुं.	58, 59
पुत्त	पुत्र	अकारान्त पु.	2
पुरिस	मनुष्य	अकारान्त पु.	57
	पुरुष		58, 59
पूजा	पूजा/भक्ति	आकारान्त स्त्री.	48
पोसण	विकास/पुष्टि	अकारान्त नपुं.	48
	पोषण		62
फल	फल	अकारान्त पु., नपुं	71
बंध	बंध	अकारान्त पु.	19
बंधुवग्ग	बंधुसमूह	अकारान्त पु.	2, 41
बाल	बालक	अकारान्त पु.	30
	बाल		53
बीज	बीज	अकारान्त नपुं	55
भत्त	भोजन	अकारान्त पु., नपुं.	15
	आहार		29
भत्ति	भक्ति	**इकारान्त** स्त्री.	46
भव	भव	अकारान्त पु.	38

भाव	अवस्था	अकारान्त पु.	56
भिक्ख	भिक्षा	अकारान्त नपुं.	29
भिक्खा	भिक्षा	आकारान्त स्त्री.	27
भिक्खु	श्रमण	*उकारान्त* पु.	20, 33
भूद	जीव	अकारान्त पु., नपुं.	34
भूमि	भूमि	इकारान्त स्त्री.	55
भोयण	भोजन	अकारान्त नपुं.	8
मंस	मांस	अकारान्त पु., नपुं.	29
मंसु	दाढी-मूँछ	*उकारान्त* पु., नपुं.	5
मणुव	मनुष्य	अकारान्त पु.	57
मधु	मधु	*उकारान्त* पु.	29
ममत्त	ममत्व	अकारान्त नपुं.	28
मरण	मरण	अकारान्त पु., नपुं.	41
मुच्छा	ममत्व बुद्धि	आकारान्त स्त्री.	6
	ममत्व भाव		21
	ममत्व		23
	मोह/आसक्ति		39
मुह	दिशा	अकारान्त नपुं.	14
मूलगुण	मूलगुण	अकारान्त पु., नपुं.	9, 14
मूलच्छेद	मूलगुण-भंग	अकारान्त पु.	30
रस	रस	अकारान्त पु., नपुं.	29
राग	राग	अकारान्त पु.	55
राय	राग	अकारान्त पु.	47

रूव	रूप	अकारान्त पु., नपुं.	3
	शरीर		4, 5, 25
रोग	रोग	अकारान्त पु.	52
रोध	निरोध	अकारान्त पु.	8
लिंग	लिंग (भेष)	अकारान्त नपुं.	5, 6, 7, 10, 25
लेव	कर्मलेप	अकारान्त पु.	51
लोग	लोक	अकारान्त पु.	26
	मनुष्य-समूह		60
लोच	लोंच	अकारान्त पु.	8
लोट्ठु	मिट्टी का ढेला	*उकारान्त* पु.	41
लोय	लोक	अकारान्त पु.	26
वंदण	स्तुति	अकारान्त नपुं.	47
वच्छलदा	वात्सल्य भाव/ अनुराग भाव	आकारान्त स्त्री.	46
वत्थु	पदार्थ	*उकारान्त* नपुं.	55
	योजना		56
	अवस्था		61
वद	महाव्रत	अकारान्त पु., नपुं.	8
	व्रत		56
वय	आयु	अकारान्त पु., नपुं.	3
वयण	वचन	अकारान्त पु., नपुं.	25
ववहारि	प्रायश्चित विधान	**इकारान्त** पु.	12
विकधा	विकथा	आकारान्त स्त्री.	15

विणअ	विनय	अकारान्त पु.	25
विणय	आदर	अकारान्त पु.	66
विराधण	पीड़ा	अकारान्त नपुं.	49
विवास	(गुरु से) दूर	अकारान्त पु.	13
विसग्ग	त्याग	अकारान्त पु.	22
विसय	विषय	अकारान्त पु.	57, 58, 73
विसुद्धि	विशुद्धता/ स्वच्छता	**इकारान्त** स्त्री.	20
विसेस	भेद	अकारान्त पु., नपुं.	55
विहार	विहार	अकारान्त पु.	15, 26, 31
वीरिय	वीर्य	अकारान्त पु., नपुं.	2
वेज्जावच्च	वैयावृत्ति	अकारान्त नपुं.	53
संग	आसक्ति	अकारान्त पु., नपुं.	24
संघ	संघ	अकारान्त पु.	49
संजम	संयमाचरण	अकारान्त पु.	36
	संयम		63, 64
	आत्मनियंत्रण		69
संभासा	वार्तालाप	आकारान्त स्त्री.	53
संसग्ग	मेल-जोल	अकारान्त पु.	68
सक्कार	देखभाल	अकारान्त पु.	62
सत्ति	शक्ति	**इकारान्त** स्त्री.	28
सत्तु	शत्रु	***उकारान्त*** पु.	41
सत्थ	शास्त्र	अकारान्त पु., नपुं.	58

सद्दहण	श्रद्धान	अकारान्त नपुं.	37
सम	श्रम	अकारान्त पु.	31
	कष्ट		47, 52
समण	श्रमण	अकारान्त पु.	1, 3, 7, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 18, 19, 22, 23, 26, 27, 28, 31, 32, 33, 35, 36, 40, 41, 43, 44, 45, 47, 49, 50, 52, 53, 54, 63, 64, 65, 66, 70
समय	आगम	अकारान्त पु.	45
	जिन-सिद्धान्त		71
समिद	साधु	अकारान्त पु.	17
समिदि	समिति	**इकारान्त** स्त्री.	8
	समूह		59
सय	सौ	अकारान्त पु., नपुं.	38
सयण	सोना	अकारान्त नपुं.	8, 16
सस्स	खेती	अकारान्त नपुं.	55
सहस्स	हजार	अकारान्त पु., नपुं.	38
साद	सुख	अकारान्त नपुं.	56

सामण्ण	श्रमणता	अकारान्त नपुं.	1, 14, 42, 67, 72, 74
	श्रमण अवस्था		13, 46
सावय	श्रावक	अकारान्त पु.	50
सासण	जिन-शासन	अकारान्त नपुं.	75
साहु	श्रमण	***उकारान्त*** पु.	34, 52
सिद्ध	सिद्ध	अकारान्त पु.	1, 34, 74
सिद्धि	सिद्धि	**इकारान्त** स्त्री.	39
सिस्स	शिष्य	अकारान्त पु.	48
सुत्त	सूत्र	अकारान्त नपुं.	25, 36
	आगम		64
	सिद्धान्त		68
सुद्धि	निर्मलता	**इकारान्त** स्त्री.	6
सुमग्ग	श्रेष्ठ मार्ग	अकारान्त पु.	59
सुह	सुख	अकारान्त नपुं.	41
सुत्तत्थ	सूत्रों के अर्थ	अकारान्त पु.	63
सोक्ख	सुख	अकारान्त नपुं.	54
हिंसा	हिंसा	आकारान्त स्त्री.	5, 16, 17

अनियमित संज्ञा

तवसा	**3/1**	तप से	28

क्रिया–कोश

अकर्मक

क्रिया	अर्थ	गा.सं.
अधिवस	रहना	70
जाय	उत्पन्न होना	11
जिय	जीना	17
जीव	जीना/ठहरना	72
णिव्वा	मुक्त होना	37
फल	फलित होना	57
भव	होना	36, 46
मर	मरना	17
मुज्झ	मूर्च्छित होना	43
	मोहित होना	44
रज्ज	आसक्त होना	43, 44
विज्ज	होना	22, 46
	विद्यमान होना	39
विहर	रहना	13
सिज्झ	मुक्त होना	37
हव	होना	5, 19, 20, 30, 50, 59, 64, 65, 67, 68
	है	26
हो	होना	4, 7, 9, 10, 36, 45, 58, 66

क्रिया-कोश

सकर्मक

क्रिया	अर्थ	गा.सं.
अणुमण्ण	स्वीकृति देना	65
अववद	निंदा/विरोध करना	65
इच्छ	चाहना	1, 70
	स्वीकार करना	15
उवकुण	उपकृत करना	49
उवया	रखना	44
कुण	करना	50
कुव्व	करना	51
खव	नाश करना	33
	क्षय करना	38, 44
गेण्ह	ग्रहण करना	23
चय	छोड़ना	68
चर	आचरण करना	14, 18
	करना	30
जाण	जानना	35
णित्थार	पार उतारना	60
दुस्स	द्वेष करना	43
पडिच्छ	स्वीकार करना	3
	चाहना	66
पडिवज्ज	अंगीकार करना	1, 52
फल	फल उत्पन्न करना	55
बुज्झ	समझना	75

भण	कहना	36
भम	परिभ्रमण करना	71
लह	प्राप्त करना	39, 54, 56, 60
वट्ट	रहना	22
	आचरण करना	31
	आदर करना	61
	प्रवृत्ति करना	67, 69
वियाण	जानना	33
सद्दह	श्रद्धा करना	64

अनियमित क्रिया

पप्पोदि 3/1	प्राप्त करना	75
पसाधयदि 3/1	प्राप्त करना	21

अनियमित कर्मवाच्य

बज्झदि	बाँधा जाता है	व कर्म 3/1 अनि 43

कृदन्त-कोश

संबंधक कृदन्त

कृदन्त शब्द	अर्थ	कृदन्त	गा.सं.
अणिगूहिय	न छिपाकर	संकृ	28
आदाय	ग्रहण करके	संकृ	7
आलोचित्ता	आलोचना करके	संकृ	12
आसिज्ज	धारण करके	संकृ	2
आसेज्ज	शरण लेकर	संकृ	12
	प्राप्त करके		43
गहिद	स्वीकार करके	संकृ अनि	71
जाणित्ता	जानकर	संकृ	31
णमंसित्ता	नमस्कार करके	संकृ	7
दिट्ठा	देखकर	संकृ अनि	52, 61, 65
पणमिय	प्रणाम करके	संकृ	1
पेच्छित्ता	समझकर	संकृ	35
भविय→भवीय	होकर	संकृ	13
वियाणित्ता	जानकर	संकृ	22
सोच्चा	सुनकर	संकृ अनि	7

भूतकालिक कृदन्त

अक्खाद	कथित	भूकृ	64
अणुगहिद	अनुगृहीत	भूकृ अनि	3

अप्पडिबद्ध	नहीं बँधा हुआ	भूकृ अनि	26
अभिजुत्त	संलग्न	भूकृ अनि	46
अविदिद	ज्ञानशून्य	भूकृ	57
आजुत्त	लगाता/नियुक्त	भूकृ अनि	28
आपिच्छ	पूछ लिया	भूकृ अनि	2
उज्जद	लगा हुआ	भूकृ अनि	50
उवजुत्त	संलग्न	भूकृ अनि	45, 60
उवजुद	उचित	भूकृ अनि	53
उद्दिट्ठ	प्रतिपादित किया	भूकृ अनि	24
उप्पाडिद	लोंच किया हुआ	भूकृ	5
उवट्ठिद	तत्पर	भूकृ अनि	7
गद	हुआ	भूकृ अनि	32, 42
	बोया गया		55
गुत्त	रक्षित	भूकृ अनि	38
चत्ता	छोड़ दिया	भूकृ अनि	73
छड्डिय	छोड़ दिया	भूकृ	19
जाद	बना	भूकृ	4
	रखा हुआ		5
	जन्म हुआ		4, 5, 25
जिद	जीत लिया गया	भूकृ अनि	40
जुत्त	युक्त	भूकृ अनि	46, 51
	स्थिर		75
णिंदिद	अस्वीकृत	भूकृ	47, 53

णिच्छिद	निर्णय किया हुआ	भूकृ अनि	4
	निश्चित अवस्था		32
	समझ लिया गया		68
	निर्धारित किया गया		71
	निश्चय कर लिया गया		72
णिद्दिट्ठ	कहा गया	भूकृ अनि	25, 73
दत्त	दिया गया	भूकृ अनि	57
पउत्त	युक्त	भूकृ अनि	12
पणद	साष्टांग प्रणाम किया	भूकृ अनि	3
पण्णत्त	कहा गया	भूकृ अनि	9
पयद	जागरूक	भूकृ अनि	11, 14
	जागरूक हुआ		14
परूविद	कहा गया	भूकृ	58
प्पडिबद्ध	बँधा हुआ	भूकृ अनि	58
भणिद	कहा गया	भूकृ	25,40,54,62, 69
भणिय	कहा गया	भूकृ	74
भूद	हुआ/बना	भूकृ	54
	हुआ		55
मद	माना गया	भूकृ अनि	16, 18, 42
	मरा हुआ		19
	माना		64

रद	अनुरक्त	भूकृ अनि	21
	संलग्न		56
रहिद	त्याग दिया गया	भूकृ अनि	26
	मुक्त		60
रूढ	लदा हुआ	भूकृ अनि	52
लद्ध	प्राप्त किया गया	भूकृ अनि	29
विजुत्त	रहित	भूकृ अनि	72
विदिद	जान लिया गया	भूकृ	73
विमुक्क	मुक्त	भूकृ अनि	6
विमोचिद	मुक्त किया गया	भूकृ	2
विसिट्ठ	उपयुक्त	भूकृ अनि	3
विहिअ	किया हुआ	भूकृ अनि	20
विहिद	स्थिर किया हुआ	भूकृ अनि	56
संजद	संयमी	भूकृ अनि	68
संजुद	युक्त	भूकृ अनि	69
संवुड	नियन्त्रित किया गया	भूकृ अनि	40
संपुण्ण	पूरा कर लिया गया	भूकृ अनि	72
समारद्ध	प्रारम्भ किया गया	भूकृ अनि	11
समिद	नियन्त्रित किया गया	भूकृ	68

समिद्ध	भरा हुआ	भूकृ अनि	71
समुट्ठिद	उचित प्रकार से प्रयत्नशील	भूकृ अनि	42
हीण	बिना	भूकृ अनि	33

विधि कृदन्त

अब्भुट्ठेय	खड़े होकर सम्मान किये जाने योग्य	विधिकृ अनि	63
उवासेय	सेवा किये जाने योग्य	विधिकृ अनि	63
कायव्व	किया जाना चाहिये	विधिकृ	12
पणिवदणीय	प्रणाम किये जाने योग्य	विधिकृ	63
विसेसिदव्व	विशेष किया जाना चाहिये	विधिकृ	61

वर्तमान कृदन्त

अविजाणंत	न जानता हुआ	वकृ	33
परिहरमाण	टालता हुआ	वकृ	13
सद्दहमाण	श्रद्धा करता हुआ	वकृ	37
सेवमाण	उपभोग करता हुआ	वकृ	22

विशेषण–कोश

शब्द	अर्थ	गा.सं.
अगारि	गृहस्थ	50
अच्चंत	अत्यन्त	71
अजधाचार	अशुद्ध-आचार	72
अज्झत्थ	मन में स्थित (अंतरंग)	73
अणंत	अनन्त	66
अणगार	श्रमण	51, 75
अणासव	कर्मास्रव-रहित	45
अणाहार	निराहारी	27
अण्ण	पर	43
अण्णाणि	अज्ञानी	38, 43
अधर	धारण करनेवाला नहीं	66
	हीण	67
अधिग	अधिकतावाले	57
	विशिष्ट	62, 66, 67, 68
अपडिकम्म	शारीरिक शृंगार से वियुक्त	5
अपत्थणिज्ज	अप्रार्थनीय	23
अपयत्त	जागरूकता-रहित	16
अप्प	थोड़ा	23, 31, 51
अप्पग	आत्मक	56

अप्पडिकुट्ठ	अस्वीकृत नहीं	23
अप्पडिपुण्ण	पूरा न भरा गया	29
अफल	निरर्थक	72
अयदाचार	जागरूकता-रहित आचरणवाला	17, 18
अवसत्त	लीन/आसक्त	73
अविसुद्ध	अविशुद्ध	20
असंजद	असंयमी	23, 36, 37
असंजम	असंयम	21
असुभ	अशुभ	60
इट्ठदर	अधिक अपेक्षित	3
उवट्ठावग	स्थापित करनेवाला	9, 10
उवदिट्ठ	उपदिष्ट	12
उवरद	रहित	59
एक्क	एक समय	29
एयग्ग	एकाग्रचित्त	32, 42
	स्थिर	32
एहिग	इस लोक संबंधी/ सांसारिक	69
कामि	इच्छुक	24
काय	कायिक	18
केवल	मात्र	28
खम	सहनशक्ति	31

गिलाण	अशक्त/रोगी	30
	रोगी	53
गुणड्ढ	गुणों में समृद्ध	3
गुत्त	संयत	40
चादुव्वण्ण	चार प्रकार	49
चित्त	नाना प्रकार का	35
छदुमत्थ	अल्पज्ञानी	56
जधत्थ	वास्तविक	72
जिदिंद	इन्द्रियों को जीतनेवाला	4
जुट्ठ	की गई सेवा	57
जुत्त	युक्त	6, 26
जेट्ठा	सर्वोत्तम	32
जेण्ह	जिन	6
जोण्ह	जिन-मार्गानुयायी	51
ण	ज्ञानी	12
णट्ठचारित्त	क्षीण चारित्रवाला	65
णाणड्ढ	ज्ञान में सम्पन्न	63
णाणा	नाना प्रकार	55
णाणी	आत्मज्ञानी	38
णिच्छिद	निश्चित	17
णिज्जावग	निर्यापक	10
णित्थारग	तारनेवाला	58

णिबद्ध	संबद्ध	14
	बँधा हुआ/ममता युक्त	15
णिरवेक्ख	अपेक्षा-रहित	20, 51
णिरावेक्ख	चाह-रहित	26
णिरुवलेव	अलिप्त	18
दायग	देनेवाला	10
धम्मिग	धर्मवत्सल	59
धर	रखनेवाला	4
	धारण करनेवाला	39
पगद	प्राकृतिक	61
पडिपुण्ण	परिपूर्ण	14, 42
पधाण	प्रधान	64
पब्भट्ठ	हीन	67
पमत्त	प्रमादी	9
पयद	जागरूक	17
पर	पर	4, 21, 26, 33
	उत्कृष्ट	54
	अनन्त	71
परम	उत्कृष्ट	7
परावेक्ख	पर की चाह रखनेवाला	6
पव्वइद	दीक्षा ग्रहण किया हुआ	69
पसंत	शान्त	72

पसत्थ	प्रशंसनीय	54, 55
	सर्वोत्तम	60
पुव्व	से युक्त/उत्पन्न	36
पुव्विया	प्राचीन	11
प्पडिच्छग	ग्रहण करनेवाला	27
प्पधाण	मुख्य	49
	प्रधान	61
बुड्ढ	वृद्ध	30
बहित्थ	बाहरस्थित (बहिरंग)	73
भागि	भागीदार/भाजन	59
मिच्छुवजुत्त	अश्रद्धा से युक्त	67
मेत्त	मात्र	17, 38
रहिद	रहित	5, 23, 28
	के बिना	49
लहु	अल्प	75
लोगिग	सांसारिक	53
	लौकिक	68, 69
वधकर	हिंसा करनेवाला	18
वसह	प्रमुख	1
विवरीद	विपरीत	55
विविह	अनेक प्रकार	43, 44
विसारद	प्रवीण	63
विहूण	रहित	13

वुड्ढ	वृद्ध	53
शुद्ध	शुद्ध	73
संतत्त	निरन्तर	16
संजद	संयमी	40
संपजुत्त	युक्त	64
संसारि	संसार में परिभ्रमण करनेवाला	66
सजोग्ग	अपने योग्य	30
सम	समान	41
समग्ग	पूर्ण	40
समभाव	एक सा भाव रखनेवाला	59
समभिहद	श्रम से थका हुआ	30
समिद	सावधान	40
सराग	सरागी	48
	राग-सहित	49
सवद	व्रत-सहित	7
सागार	गृहस्थ	51
	श्रावक	75
सासणत्थ	जिनशासन में दृढ़तापूर्वक लगे हुए	65
सासव	कर्मास्रव-सहित	45
सिद्ध	स्थापित	35

सुद्ध	शरीर के दोष से मुक्त	5
	शुद्ध	45, 60
	शुद्धोपयोगी	74
सुह	शुभ	45, 53, 60
सेवि	अभ्यासी	59
सेस	अन्य सब	10
	बाकी	45

अनियमित विशेषण

लेवी 1/1	कर्म से बँधनेवाला	31

संख्यावाची विशेषण

ति	तीन	38, 40, 42
पंच	पाँच	40

अनियमित संख्यावाची विशेषण

छस्सु	छ	18

सर्वनाम-कोश

सर्वनाम शब्द	अर्थ	लिंग	गा.सं.
अम्ह	मैं	पु., नपुं., स्त्री.	3, 4
एत	यह	पु., नपुं.	9, 71
एता	यह	स्त्री.	54
एय	यह	पु., नपुं.	75
क	क्या	पु., नपुं.	24
ज	जो	पु., नपुं.	14, 22, 36, 38, 39, 42, 49,65,66,71,73, 75
	जो कोई		44
त	वह	पु., नपुं.	3, 7, 9, 10, 11, 12, 14, 21, 22, 27, 28, 31, 35, 36, 38, 39, 40, 42,44, 45, 48, 49, 50, 58, 59, 65, 66, 67, 69, 71, 72, 74, 75
ता	वह	स्त्री.	16, 30, 31
सव्व	सब	पु., नपुं.	16
	सभी		35, 59
	समस्त		19, 34, 39

अव्यय-कोश

अव्यय	अर्थ	गा.सं.
अजधा	अनुपयुक्त रूप से	71
अण	नहीं	27
अणेसणं	अनिच्छापूर्वक	27
	द्वितीयार्थक अव्यय	
अध	और	19
	अब	24
	इसलिए	27
अव	निरर्थक प्रयोग	59
अहियं	ज्यादा	70
आदसत्तिए	अपनी शक्तिपूर्वक 3/1	52
	तृतीयार्थक अव्यय	
इति	इस प्रकार	10
	वाक्यार्थद्योतक	16, 18
	इसलिए	24
	भी	24
	अतः	42
	क्योंकि	54
	शब्दस्वरूपद्योतक	58, 69, 73
	ऐसा	61, 64
	पादपूरक	66
	इस प्रकार ही	71

इदि	इस प्रकार	3, 4
	अतः	19
	शब्दस्वरूपद्योतक	25
	निश्चय ही	36
इय	निश्चय ही	16
इह	इस लोक में	4, 22, 26, 36, 62
	इस संसार में	72
एव	ही	54
एवं	और	1
कधं	कैसे	21
कहं	कैसे	20
किंचण	थोड़ा सा	24
किंचि	कुछ भी	4
किध	कैसे	21, 33, 36
किह	कैसे	58
खलु	पादपूरक	29
	वास्तव में	9
च	और	3, 8, 25, 48
	तथा	62
चरणं	चर्या से	29
	द्वितीयार्थक अव्यय	
चावि	तो भी	68
	यद्यपि	69

चिरं	दीर्घकाल तक	72
च्चिय	ही	74
जदं	जागरूकतापूर्वक	18
	द्वितीयार्थक अव्यय	
जदि	यदि	1, 11, 18, 31, 39, 43, 44, 46, 50, 51, 64, 66, 67, 68, 69, 70
	जो	23, 37
	अगर	58
जध	जैसा	4, 5, 25
जधा	जिस तरह से	30
जस्स→जेण	चूँकि	27
	तृतीयार्थक अव्यय	
जहा	जैसा	29
जुगवं	एक ही साथ	42
ण	नहीं	4, 6, 5, 19, 20, 22, 29, 30, 36, 37, 39, 44, 47, 50, 53, 56, 64, 65, 68, 72
	नहीं है	73
णत्थि	नहीं है	4, 17, 21, 36, 37
णमो	नमस्कार	74

णिच्चं	सदैव	13, 14, 18, 49, 70
णियदं	आवश्यकरूप से	44
णु	प्रश्नद्योतक	20
णेव	नहीं	33, 44
तं	इसलिए	27
	वाक्य-उपन्यास	29
तदो	इसलिए	32, 61
तध	इस प्रकार	21
तम्हा	इसलिये	70
ता	उससे	54
तो	तो	71
दिवा	दिन में	29
दु	ही	42
धुवं	निश्चित रूप से	19
पदोसदो	द्वेष से/पूर्वक 5/1	65
	पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	
पि	भी	3, 25
	ही	7, 27
पुण	परन्तु	34
	और	41
पुणो	ही	11
	पादपूरक	15
	फिर	30
	परन्तु	39
	और	54

पुणो पुणो	बार-बार	1
य	और	14, 20, 34, 45, 57, 74
	पादपूरक	25
	तथा	48, 74
व	अथवा	13, 17, 19, 31, 57
	की तरह	18
	जैसे कि	55
	पादपूरक	58
वा	अथवा	15, 30, 52, 60, 70
	पादपूरक	16, 53, 54
	भी	30, 39
	और	37
	तथा	21, 43
	विकल्प बोधक अव्यय	21, 43
वि	पादपूरक	18, 35
	ही	23, 49
	भी	28, 37, 39, 45, 49,51, 64, 66
वेज्जावच्चत्थं	वैयावृत्ति के लिए	50
समं	एक समान	70
सम्मं	सम्यक् प्रकार से	73
सव्वदो	पूर्णरूप से	34

से	वाक्य का उपन्यास	49, 50
ह	पादपूरक	55
हि	निश्चय ही	20, 35, 48, 63, 65
	ही	37
	भी	44
	पादपूरक	62, 65

अनियमित अव्यय

अणुकंपया	अणुकंपापूर्वक 3/1 तृतीयार्थक अव्यय	51

परिशिष्ट–2

छंद[1]

छंद के दो भेद माने गए है-

1. मात्रिक छंद 2. वर्णिक छंद

1. मात्रिक छंद– मात्राओं की संख्या पर आधारित छंदो को 'मात्रिक छंद' कहते हैं। इनमें छंद के प्रत्येक चरण की मात्राएँ निर्धारित रहती हैं। किसी वर्ण के उच्चारण में लगनेवाले समय के आधार पर दो प्रकार की मात्राएँ मानी गई हैं- ह्रस्व और दीर्घ। ह्रस्व (लघु) वर्ण की एक मात्रा और दीर्घ (गुरु) वर्ण की दो मात्राएँ गिनी जाती हैं-

लघु (ल) (।) (ह्रस्व)

गुरु (ग) (ऽ) (दीर्घ)

(1) संयुक्त वर्णों से पूर्व का वर्ण यदि लघु है तो वह दीर्घ/गुरु माना जाता है। जैसे- 'मुच्छिय' में 'च्छि' से पूर्व का 'मु' वर्ण गुरु माना जायेगा।

(2)जो वर्ण दीर्घस्वर से संयुक्त होगा वह दीर्घ/गुरु माना जायेगा। जैसे- रामे। यहाँ शब्द में 'रा'और 'मे' दीर्घ वर्ण है।

(3) अनुस्वार-युक्त ह्रस्व वर्ण भी दीर्घ/गुरु माने जाते हैं। जैसे- 'वंदिऊण' में 'व' ह्रस्व वर्ण है किन्तु इस पर अनुस्वार होने से यह गुरु (ऽ) माना जायेगा।

(4) चरण के अन्तवाला ह्रस्व वर्ण भी यदि आवश्यक हो तो दीर्घ/गुरु मान लिया जाता है और यदि गुरु मानने की आवश्यकता न हो तो वह ह्रस्व या गुरु जैसा भी हो बना रहेगा।

---

1. देखें, अपभ्रंश अभ्यास सौरभ (छंद एवं अलंकार)

2. वर्णिक छंद– जिस प्रकार मात्रिक छंदों में मात्राओं की गिनती होती है उसी प्रकार वर्णिक छंदों में वर्णों की गणना की जाती है। वर्णों की गणना के लिए गणों का विधान महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक गण तीन मात्राओं का समूह होता है। गण आठ हैं जिन्हें नीचे मात्राओं सहित दर्शाया गया है-

यगण - ।ऽऽ

मगण - ऽऽऽ

तगण - ऽऽ।

रगण - ऽ।ऽ

जगण - ।ऽ।

भगण - ऽ।ऽ

नगण - ।।।

सगण - ।।ऽ

प्रवचनसार में मुख्यतया **गाहा छंद** का ही प्रयोग किया गया है। इसलिए यहाँ **गाहा छंद** के लक्षण और उदाहरण दिये जा रहे हैं।

लक्षण–

गाहा छंद के प्रथम और तृतीय पाद में 12 मात्राएँ, द्वितीय पाद में 18 तथा चतुर्थ पाद में 15 मात्राएँ होती हैं।

उदाहरण–

ऽऽ II I I ऽऽ   I I IIIऽ Iऽ I ऽ II ऽ
एवं पणमिय सिद्धे   जिणवरवसहे पुणो पुणो समणे।।
II ऽ II ऽ ऽ ऽ   II ऽI I ऽ I II ऽ ऽ
पडिवज्जदु सामण्णं   जदि इच्छदि दुक्खपरिमोक्खं।।

II ऽ ऽ ऽ IIऽ   ऽ I I ऽ ऽ I II I ऽ I Iऽ
अयदाचारो समणो छस्सु वि कायेसु वधकरो त्ति मदो।
I I I Iऽ I I ऽ ऽ I Iऽ I Iऽ III ऽ ऽ
चरदि जदं जदि णिच्चं कमलं व जले णिरुवलेवो।।

IIIIऽ I I ऽ ऽ ऽ ऽ I IऽIऽI I I II ऽ
उवयरणं जिणमग्गे लिंगं जहजादरूवमिदि भणिदं।
II IIऽ I I I I ऽ ऽ ऽ I Iऽ I ऽ ऽऽ
गुरुवयणं पि य विणओ सुत्तज्झयणं च णिद्दिट्ठं।।

ऽ I Iऽऽ II ऽ ऽऽ I I ऽ IIIIII ऽ ऽ
केवलदेहो समणो देहे वि ममत्तरहिदपरिकम्मा।
ऽऽ ऽ ऽ IIऽ I I ऽI I ऽ Iऽ ऽ ऽ
आजुत्तो तं तवसा   अणिगूहिय अप्पणो सत्तिं।।

सहायक पुस्तकें एवं कोश

1.	प्रवचनसार	: प्रस्तावना व अंग्रेजी अनुवाद- डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये हिन्दी अनुवादक-हेमराज पाण्डेय (श्रीपरमश्रुत प्रभावक मण्डल, श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, अगास, चतुर्थ आवृत्ति, 1984)
2.	प्रवचनसार	: हिन्दी अनुवादक-पण्डित राजकिशोर जैन (श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्दपरमागम ट्रस्ट, इन्दौर एवं पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर)
3.	प्रवचनसार	: हिन्दी अनुवादक- श्री पण्डित परमेष्ठीदासजी न्यायतीर्थ (श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौराष्ट्र), 1964)
4.	पाइय-सद्द-महण्णवो	: पं. हरगोविन्ददास त्रिविक्रमचन्द्र सेठ (प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी,1986)
5.	कुन्दकुन्द-शब्दकोश	: डॉ. उदयचन्द्र जैन (श्री दिगम्बर जैन साहित्य-संस्कृति संरक्षण समिति, दिल्ली, 1989)
6.	प्राकृत-हिन्दी शब्दकोश	: डॉ. उदयचन्द्र जैन (न्यु भारतीय बुक कॉर्पोरेशन, दिल्ली, 2005)

7.	संस्कृत-हिन्दी कोश	: वामन शिवराम आप्टे (कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996)
8.	हेमचन्द्र प्राकृत व्याकरण, भाग 1-2	: व्याख्याता श्री प्यारचन्द जी महाराज (श्री जैन दिवाकर-दिव्य ज्योति कार्यालय, मेवाड़ी बाजार, ब्यावर, 2006)
9.	प्राकृत भाषाओं का व्याकरण	: लेखक -डॉ. आर. पिशल हिन्दी अनुवादक - डॉ. हेमचन्द्र जोशी (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, 1958)
10.	प्राकृत रचना सौरभ	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2003)
11.	प्राकृत अभ्यास सौरभ	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2004)
12.	प्रौढ प्राकृत रचना सौरभ, भाग-1	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 1999)
13.	अपभ्रंश अभ्यास सौरभ (छंद एवं अलंकार)	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर)
14.	प्राकृत- हिन्दी-व्याकरण (भाग-1, 2)	: लेखिका- श्रीमती शकुन्तला जैन संपादक- डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2012, 2013)
15.	प्राकृत-व्याकरण (संधि- समास- कारक-तद्धित-स्त्रीप्रत्यय-अव्यय)	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2008)

-*-